CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

चैती

डॉ० शान्ति जैन

ग्रन्थालय
...डी, वाराणसी-५
...:3/88

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

चैती

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

आम्नाय-ग्रन्थालय,
भरतनिधि, करौंदी
वाराणसी-5

क्र: 3/88
आम्नाय-ग्रन्थालय,
भरतनिधि, करौंदी
वाराणसी-5

चैती

डा० शान्ति जैन

उत्तर प्रदेश संगीत नाटक अकादमी

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

आम्नाय-ग्रन्थालय,
भरतनिधि, करौंदी
वाराणसी-5

CHAITEE : Dr. Shanti Jain

मूल्य : 12.00 रुपया

© प्रकाशकाधीन

प्रथम संस्करण : 1980

प्रकाशक : डॉ० समर बहादुर सिंह
सचिव, उत्तर प्रदेश संगीत नाटक अकादमी,
कैसरबाग, लखनऊ—226001

मुद्रक : पुनार मुद्रक, 117 नजीराबाद, लखनऊ

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

आम्नाय-ग्रन्थालय,
भरतनिधि, करौंदी
वाराणसी-5

अकादमी की ओर से

शीत से ठिठुरती प्रकृति ऋतुराज वसंत को पा पुलकित हो उठी। उसी की प्रतीक्षा तो कर रही थी वह अव तक इतनी विकलता से। उसकी वह पुलक मुखरित हुई कोयल की कूक में, पक्षियों के कलरव में, भौंरों की भैरवी में। मनभावन वसंत ने वातावरण में एक अजीव मादकता विखेर दी। आम्र मंजरियों से अठखेलियाँ करते मधुप, माधवी लताओं के वाहुपाश में आवद्ध वृक्ष और सौरभ उड़ेलती पुष्प-वाटिकाओं ने उस मादक माहौल में और उत्तेजना भर दी। सारी प्रकृति वासंती-माधुरी से ओतप्रोत हो उठी।

प्रकृति का प्रभाव भला प्राणी पर कैसे न पड़ता। उस वासंती मादकता ने उसे भी उन्मत्त कर दिया और सहज ही उसके कंठ से फट पड़ी वह मोहक गायन शैली, जिसे कालान्तर में उसने एक छोटा सलोना नाम दे दिया, "चैती"। "फाग" भरे फागुन के बाद चैत रानी "चैती" जनमानस पर छा गयी। प्रमत्त कवि और उन्मत्त गायक दोनों चल पड़े इसे अपनी-अपनी कल्पना से सजाने-सँवारने। उनके इस संयोग-सहयोग से रसभरी "चैती" और रसीली वन गई। "चैती" हिन्दुस्तानी संगीत की सही अर्थों में चहेती वन गई।

"चैती" का काव्यात्मक साहित्य मुख्यतः ऋतुपरक रहा। रसराज श्रृंगार भी यदा-कदा उसमें अपनी छटा दिखाता रहा। धुन उसकी मूलतः खमाजी रागों में रमती रही। कभी उसे "तिलक कामोद" भाता तो कभी "देश"। "दीपचंदी" की मंथर गति में वह अपना सहज सौंदर्य विखेर, अंतरे के वाद स्थाई पर आ जव वह "कहरवा" की लगी में आवद्ध स्वर-लय की छटा विखेरने लगती तो श्रोता भाव-विभोर हो जाते। उत्तर प्रदेश के पूर्वी अंचल में उपजी-पनपी "कजली" और "चैती" दोनों आगे चलकर उस उप-

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

शास्त्रीय संगीत-शैली की जननी बनी जिसे आज हम "ठुमरी" के नाम से जानते हैं।

पारंपरिक गायन शैलियों का पुनर्प्रतिष्ठापन, उनका प्रचार-प्रसार अकादमी का प्रमुख उद्देश्य रहा है। डॉ० शांति जैन की "चैंती" उस उद्देश्य की प्राप्ति में सहायक सिद्ध होगी, ऐसा हमारा विश्वास है।

समर बहादुर सिंह
सचिव

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

आम्नाय-ग्रन्थालय,
भरतनिधि, करौंदी
वाराणसी-5

क्रम

खण्ड : 1—चैती : स्वर और स्वरूप 5

शास्त्रीय संगीत और लोक-संगीत का संक्षिप्त परिचय 7

लोकगीतों के प्रकार 22

चैती का स्वरूप : एक साहित्यक पर्यवेक्षण 37

चैती का उद्‌भव और विकास 54

चैती के प्रकार 67

खण्ड : 2—चैती-चयन 83

खण्ड : 3—चैती : स्वरलिपियों में 107

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

प्रस्तावना

चैती, सीमित क्षेत्र की अत्यन्त कर्णप्रिय गीत-शैली है जो बिहार तथा पूर्वी उत्तरप्रदेश में विशेष रूप से प्रचलित है। इसका गायन फाल्गुन पूर्णिमा की रात्रि से आरंभ होकर संपूर्ण चैत्रमास तक चलता रहता है। वसन्त की परिधि में आने के कारण इन गीतों में वसन्त की मादकता सहज स्वाभाविक है। वसन्त का श्रृंगार-भाव इन गीतों में उभर आया है।

मात्र मादकता एवं श्रृंगार नहीं, चैती गीतों की करुणा भी अपने ढंग की अलग ही है—

नइ भेजे पतिया
आयल चैत उतपतिया हो रामा।

इस चैती गीत में नायिका की करुणा और प्रियतम के प्रति उपालम्भ दोनों का चित्रण हुआ है। मैथिली चैतावर में करुण रस की व्यंजना अपेक्षाकृत अधिक हुई है।

सांगीतिक दृष्टि से चैती गीतों की सरसता एवं कमनीयता का कहना ही क्या ? चैत के महीने में गदरायी अमराइयों में, कोकिल के स्वरों के साथ गाँवों में गूंजते हैं—सामूहिक चैती के स्वर, ढोल और झाल के साथ। सारा वातावरण संगीत के रस में सराबोर हो जाता है।

चैती में कुल तीन खण्ड हैं—प्रथम खण्ड में पाँच अध्याय हैं। पहलेअध्याय में शास्त्रीय संगीत तथा लोक-संगीत की पारस्परिकता, लोक-संगीत का उद्‌भव, उसकी साहित्यिकता आदि वर्णित है। यह निर्विवाद है कि शास्त्रीय संगीत की जड़ में लोक-संगीत है। लोक-संगीत ही परिष्कृत होकर ठुमरी, दादरा के रूप में आया।

दूसरे अध्याय में लोकगीतों के प्रकार का चित्रण करते हुए होली पर कुछ विशेष दृष्टिनिक्षेप इसलिये किया गया है कि होली और चैती आपस में

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

बहुत गहरे तक जुड़ी हैं। दोनों की समय-सीमा भी वसन्त ऋतु में है और दोनों की गायन-शैली में भी बहुत कुछ साम्य है।

पुस्तक के तीसरे अध्याय में चैत्र माह का साहित्यिक मूल्यांकन, चैती गीतों का वर्ण्य-विषय तथा इनमें धार्मिक भावना का चित्रण किया गया है।

चौथा अध्याय चैती के उद्भव और विकास, उसके सांगीतिक दृष्टि-कोण आदि से संबंधित है।

पाँचवें अध्याय में चैती के प्रकार, इसकी गायन-शैली, इसकी सामयिकता, स्थानीयता एवं बोली की चर्चा है।

पुस्तक के दूसरे खण्ड में कुछ ललित चैती गीत दिये गये हैं। इनमें विभिन्न विषयों से संबंधित चैती गीत तो दिये ही गये हैं, भोजपुरी, मगही, मैथिली, अंगिका, वज्जिका, अवधी, बनारसी, साहित्यिक एवं निर्गुण चैतियाँ भी संग्रहीत हैं।

पुस्तक का तीसरा खण्ड चैती का व्यावहारिक पक्ष कहा जा सकता है। इस खण्ड में बारह चैती गीतों की विभिन्न धुनें स्वरलिपि की सहायता से लिखी गई हैं।

उत्तर प्रदेश संगीत नाटक अकादमी के सचिव तथा आकाशवाणी के भूतपूर्व उपमहानिदेशक डॉ० समर बहादुर सिंह ने बड़ी उदारता एवं विश्वास के साथ इस पुस्तक-लेखन का भार मेरे दुर्बल हाथों में देकर न केवल मुझे प्रोत्साहन दिया है, बल्कि इस तरह के भावी कार्यों की ओर मेरी अभिरुचि एवं जिज्ञासा भी बढ़ाई है। उनका वात्सल्यपूर्ण सौजन्य मेरे लिये अविस्मरणीय है।

अग्रज-तुल्य श्री नर्मदेश्वर सिन्हा 'नरेश' जी ने अपने बहुमूल्य क्षणों को बाँटकर मुझे चैती के विभिन्न पक्षों की जानकारी दी है। श्री नरेश जी हिन्दी साहित्य के 'नकेनवाद' की एक कड़ी हैं। उनके सौजन्यपूर्ण सहयोग के लिये मैं ऋणी हूं।

चैती के सांगीतिक पक्ष को उजागर करने में बिहार के बहुचर्चित संगीत साधक निर्गुण पदों के अनन्य गायक श्री ब्रह्मदेव नारायण सिंह का स्नेहपूर्ण परामर्श मुझे समय–समय पर मिलता रहा है। उनका सारस्वत ऋण चुकाने की क्षमता मुझमें नहीं है।

लोक-संगीत की प्रख्यात कलाकार एवं संग्रहीता आदरणीया चाची श्रीमती विन्ध्यवासिनी देवी समय-समय पर उदार भाव से अच्छे-अच्छे लोक

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

गीत देती रही हैं। उनके अलावा वाराणसी के पं० महादेव मिश्र तथा पटना सिटी के श्री केसरी नन्दन 'भगत' ने समय निकालकर अपने भण्डार से चैती गीतों की धुनें दी हैं। ऐसे सरल कलाकारों के प्रति मैं अपना आभार व्यक्त करती हूँ।

बिहार राष्ट्रभाषा परिषद्, पटना के पं० परमानन्द पाण्डे ने अंगिका बोली में तथा डॉ० अजितनारायण सिंह तोमर ने वज्जिका बोली में चैती-गीत देकर निश्चय ही मुझे कृतार्थ किया है। इस संस्था के पुस्तकालय एवं पटना की सिन्हा लाइब्रेरी के अधिकारियों से मुझे संदर्भ-ग्रन्थों के चयन में अमूल्य सहयोग मिला है। संबद्ध सभी अधिकारियों के प्रति मैं कृतज्ञ हूँ।

पुस्तक जैसी बन पड़ी है, पाठकों के सामने है। सुधी पाठक मेरी रचना को स्वीकारें तो मेरा श्रम सार्थक होगा।

18 अक्तूबर, 1979 शान्ति जैन
पटना

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

खण्ड : 1

चैती : स्वर और स्वरूप

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

KC Gangrade 4.3.82

1

शास्त्रीय संगीत और लोक-संगीत का संक्षिप्त परिचय

शास्त्रों में संगीत की अनेक परिभाषाएँ मिलती हैं, किन्तु संक्षेप में इतना कहने से काम चल सकता है कि गायन, वादन और नृत्य को संगीत कहते हैं। **संगीत-रत्नाकर** में लिखा है–

गीतं वाद्यम् च नृत्यं च त्रयं संगीतमुच्यते ।

इनमें विशेष रूप से गायन को ही श्रेष्ठ माना जाता है, जैसा कि 'संगीत' शब्द की व्युत्पत्ति से भी स्पष्ट है। 'सम्' उपसर्ग पूर्वक 'गै' धातु में 'क्त' प्रत्यय लगाकर (सम् + √गै + क्त) 'संगीत' शब्द बनता है, जिसका अर्थ होता है— सम्यक् रूप से गाया जानेवाला गीत अथवा सहगान रूप में गाया जानेवाला गीत। दोनों अर्थों में गायन का ही प्राधान्य प्रतीत होता है, इस बात से इन्कार नहीं किया जा सकता। संस्कृत नाटककार **शूद्रक** ने अपने **मृच्छकटिक** नाटक में 'संगीत' का अर्थ 'मधुर गायन' किया है जो नृत्य और वाद्ययंत्रों के साथ गाया जाये—

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

गीतं वाद्यम् नर्तनं च त्रयं संगीतमुच्यते ।
किमन्यदस्याः परिषदः श्रुतिप्रसादनतः संगीतात् ।

सामान्यतः भारतीय संगीत को हम दो भागों में विभक्त कर सकते हैं—

(1) भाव संगीत
(2) शास्त्रीय संगीत

भाव संगीत के अन्तर्गत सुगम संगीत, लोक-संगीत, भजन, उत्सव-विशेष के गीत, ॠतुगीत, झूले के गीत, फ़िल्मी गीत तथा ग़जल को स्थान दिया जा सकता है जिससे सर्वसाधारण का मनोरंजन होता है। इस प्रकार के संगीत को समझने के लिये संगीत-शास्त्र के व्याकरण में उलझने की आवश्यकता नहीं होती। इनमें स्वर, लय और काव्य तीनों का आनन्द प्राप्त होता है। इस तरह का संगीत जनसंगीत होता है। भाव संगीत रागों पर आधारित हो सकता है किन्तु वह इस प्रकार के कठोर नियमों में नहीं बँधा है।

जो संगीत स्वर, ताल, राग, लय आदि के नियमों में बंधकर आकर्षक ढंग से गाया अथवा बजाया जाता है, उसे शास्त्रीय संगीत कहते हैं। इसमें नाद के नियंत्रण, अभ्यास और लय-ताल तथा सुर के सम्यक् ज्ञान की अपेक्षा होती है। विहित मार्गों का अनुगमन कर इसमें स्वर-ग्राम की अभिव्यक्ति की प्रक्रियाएँ सीखनी पड़ती हैं। शास्त्रीय संगीत का एक व्याकरण होता है, एक शास्त्र होता है, जिसके अनुसार गायन अथवा वादन होता है। इसमें श्रुति, स्वर, सप्तक, थाट, राग, मूर्छना, गमक, मींड, तान, आलाप आदि का विस्तृत ज्ञान प्राप्त करना आवश्यक होता है।

इसके विपरीत लोक-संगीत शास्त्रीय संगीत के नियमों की कठोरता से मुक्त होता है। यह बात नहीं कि उसमें शास्त्रीयता या तालबद्धता नहीं होती। लय, ताल और स्वर सहज रूप से लोक-संगीत का अनुगमन करते हैं। वह सहज बोधगम्य होता है। शास्त्रीय संगीत व्याकरणपरक विधि-विशेष के कठोर बन्धनों से युक्त होता है, जबकि लोक-संगीत निर्झर-सा स्वच्छन्द होता है। शास्त्रीय संगीत में अपेक्षित अभ्यास की अनिवार्यता लोक-संगीत में नहीं होती। दूसरे शब्दों में कहा जा सकता है कि शास्त्रीय संगीत शिल्प-प्रधान होता है तथा लोक-संगीत भाव-प्रधान। शास्त्रीय संगीत अभिजात्य वर्ग का संगीत है, लोक-संगीत हर वर्ग, हर क्षेत्र का संगीत है।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

लोक शब्द संस्कृत के 'लोकदर्शने' धातु में **घञ्** प्रत्यय लगाकर बना है, जिसका अर्थ है—देखनेवाला। साधारण जनता के अर्थ में इसका प्रयोग **ऋग्वेद** में अनेक स्थानों पर हुआ है। उपनिषदों में, **पाणिनि** की **अष्टाध्यायी** में, **भरत मुनि** के **नाट्यशास्त्र** में तथा **महाभारत** आदि में अनेक नाट्यधर्मी एवं लोकधर्मी प्रवृत्तियों का उल्लेख हुआ है।

डॉ० वासुदेव शरण अग्रवाल के शब्दों में, लोक हमारे जीवन का महा-समुद्र है, जिसमें भूत, भविष्य और वर्तमान संचित हैं। अर्वाचीन मानव के लिये लोक सर्वोच्च प्रजापति है। **डॉ० हजारी प्रसाद द्विवेदी** ने 'लोक' शब्द का अर्थ जनपद या ग्राम से न लेकर नगरों व गांवों में फैली उस समूची जनता से लिया है जो परिष्कृत, रुचि-सम्पन्न तथा सुसंस्कृत समझे जानेवाले लोगों की अपेक्षा अधिक सरल और अकृत्रिम जीवन की अभ्यस्त होती है।

विश्वभारती, शान्तिनिकेतन के उड़िया विभाग के भूतपूर्व अध्यक्ष **डॉ० कुंजबिहारी दास** ने लोकगीतों की परिभाषा बताते हुए कहा है—'लोकसंगीत उन लोगों के जीवन की अनायास प्रवाहात्मक अभिव्यक्ति है जो सुसंस्कृत तथा सुसभ्य प्रभावों से बाहर कम या अधिक रूप में आदिम अवस्था में निवास करते हैं। यह साहित्य प्रायः मौखिक होता है और परम्परागत रूप से चला आ रहा है।'

कुछ विद्वान् लोकगीत को केवल ग्रामगीत की सीमा में बाँधकर उसकी व्यापकता को कम कर देते हैं किन्तु वस्तुतः लोकगीतों की सीमा केवल गांव की चारदीवारी तक नहीं है। अब तो नगर और महानगर भी इसके प्रभाव से अछूते नहीं रह गये हैं। **हिन्दी साहित्यकोश** में लोकगीत शब्द के तीन अर्थ दिये गये हैं—

(1) लोक में प्रचलित गीत,
(2) लोकनिर्मित गीत, तथा
(3) लोक-विषयक् गीत

पर वस्तुतः लोकगीत का अर्थ लोक में प्रचलित गीत से ही जोड़ा जा सकता है। इस अर्थ के दो तात्पर्य हो सकते हैं——

(1) किसी अवसर पर प्रचलित गीत, तथा
(2) परम्परागत गीत।

लोकगीत को किसी व्यक्तित्व से नहीं जोड़ा जा सकता क्योंकि लोक-गीतों की प्रवृत्ति लोकमानस की स्वाभाविक प्रवृत्ति है। लोक द्वारा निर्मित

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

होने पर भी लोकगीत किसी व्यक्ति-विशेष से संबद्ध नहीं होते, क्योंकि उसके रचनाकार को लोकमानस से तादात्म्य रखकर ही समस्त लोक के व्यक्ति को गीत में उभारना होता है।

लोकसाहित्य वस्तुतः जनता का वह साहित्य है जो जनता द्वारा, जनता के लिये लिखा जाता है—

'The poetry of the people, by the people, for the people'

अंग्रेजी में फ़ोक का अर्थ है–लोक, राष्ट्र, जाति, सर्वसाधारण या वर्ग-विशेष। इसीलिए Folk Song के अनुरूप हिन्दी में लोकगीत संज्ञा दी गई है। अंग्रेजी का Folk Song जर्मनी के Volkslied का अपभ्रंश है। समस्त मानव समाज में चेतन-अचेतन के रूप में जो भावनाएँ गीतबद्ध हुई हैं, उनको लोकगीत कहना उचित है। डॉ० बार्क ने 'फ़ोक' शब्द की व्याख्या करते हुए लिखा है कि इससे सभ्यता से दूर रहनेवाली किसी पूरी जाति का बोध होता है। अंग्रेजी का 'फ़ोक' जर्मनी में Volk के रूप में प्रचलित है। आंग्लभाषी 'फ़ोक' को असंस्कृत एवं मूढ़समाज का द्योतक मानते हैं, परन्तु सर्वसाधारण एवं राष्ट्र के लोगों के लिये भी इसका प्रयोग होता है। अतः हिन्दी का लोक शब्द अंग्रेजी के 'फ़ोक' से अधिक भावप्रवण प्रतीत होता है। ग्रिम का कथन है कि लोकगीत अपने-आप बंनते हैं—

'A Folk-Song composes itself'[1]–Grimm.

पेरी ने लिखा है कि लोकगीत आदिमानव का उल्लासमय संगीत है—

'The primitive spontaneous music has been called folk music.[2]'–Perey.

तात्पर्य यह, कि गुफाओं में पनपते हुए आदिमानव में जब थोड़ी बुद्धि आई और उसके आधार पर उसकी भावनाओं के अंकुर फूटे तो उन्हें व्यक्त करने के लिये उसने आलाप करना शुरू किया। यही आदि-संगीत पेरी के शब्दों में लोकगीत है। राल्फ वी० विलियम्स का कथन हैं कि लोकगीत न पुराना होता है, न नया। वह तो जंगल के एक वृक्ष के जैसा है, जिसकी जड़ें तो दूर जमीन में धँसी हुई हैं, परन्तु जिनमें निरन्तर नई-नई डालियाँ पल्लव और फल लगते हैं–

1. Encyclopaedia Brittanica–Vol. IX, page 445.
2. वही

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

'A folk-song is neither new nor old, it is like a forest tree with its roots deeply burried in the past, but which continually puts forth new branches, new leaves, new fruits.'[1]

—Ralph V. Williams

लोकगीत हमारे जीवन-विकास के इतिहास हैं। उनमें जीवन के सुख-दुख, मिलन-विरह, उतार-चढ़ाव की भावनाएँ व्यक्त हुई हैं। सामाजिक स्थिति के क्षण-क्षण के भाव लोकगीतों में बँधे हैं। इनमें सरल अनुभूति और भावों की गहराई है। श्री **देवेन्द्र सत्यार्थी** कहते हैं कि लोकगीत का मूल जातीय-संगीत में है।

लोकगीत विभिन्न भूखण्डों पर फैले अपने धर्म, विश्वास और परम्परा पर आश्रित मानव-मन के मानचित्र हैं। इनका जन्म बुद्धि से न होकर हृदय से हुआ है। इनकी सृष्टि मुख से और निवास हृदय में है। ये तर्क पर नहीं, वरन् भावना पर आधारित हैं। लोकगीतों में छन्द-शास्त्रों की वेड़ी और अलंकारों की बोझिलता नहीं है, बल्कि जनमानस का पवित्र गंगा-जमुनी प्रवाह है।

लोकगीतों का सबसे बड़ा गुण इनकी सहज स्वाभाविकता, स्वच्छता एवं सरलता है। इनमें मानव के सुख-दुःख का इतिहास है, स्नेह तथा करुणा के विविध रंग हैं। कहीं पुत्रजन्म के अवसर पर हर्ष और उल्लास के स्वर उभरते हैं तो कहीं कन्या की विदाई या प्रिय-प्रवास की वेला में पीड़ा के स्वर मुखर होते हैं। लोकगीतों के इन स्वरों में विभिन्नता होते हुए भी एकरूपता है, यही इनकी स्वाभाविकता का रहस्य है!

लोकगीतों में भावों की अभिव्यक्ति स्वाभाविक और हृदय से निकली हुई लय के साथ होती है। हरे जंगलों में जैसे पंछी उन्मुक्त होकर गाते हैं उसी प्रकार लोकगीत स्वाभाविक रीति से हृदय से फूटकर निकलते हैं। इनमें सरल काव्य होता है, भावों की खींचतान नहीं होती।[2]

डॉ० हजारी प्रसाद द्विवेदी का कथन है कि लोकगीत की एक-एक बहू के चित्रण पर रीतिकाल की सौ-सौ मुग्धाएँ, खण्डिताएँ और धीराएँ न्योछावर की जा सकती हैं, क्योंकि ये निरलंकार होने पर भी प्राणमयी हैं और वे अलं-

1. Encyclopaedia Brittanica–Vol. IX, page 445.
2. भारतीय लोक-साहित्य—डॉ० श्याम परमार

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

कारों से विभूषित होने पर भी निष्प्राण हैं । ये अपने जीवन के लिये किसी शास्त्र-विशेष की मुखापेक्षी नहीं हैं । ये अपने-आप में परिपूर्ण हैं ।[1]

लोकगीत वस्तुतः लोक-निःसृत प्राकृतिक गान हैं, जिनमें लोक का समस्त जीवन व्यक्त हुआ है । इन लोकगीतों का चित्रफलक इन्द्रधनुषी है जो क्षितिज के एक छोर से उठकर दूसरे पर समाप्त होता है । उसके वितान में रंगारंग चित्र हैं । शिशु के प्रथम क्रन्दन से लेकर जीवन की अन्तिम कड़ी तक के भाव-चित्र लोकगीतों में मिलते हैं । उनमें वस्तुतः लोक-जीवन के सच्चे हृदय की झलक है । भाई से बिछुड़ी बहन की करुण कथा, स्त्रियों का आभूषण प्रेम, सौत के, सास-ननद के अत्याचारों से पीड़ित स्त्री की मनोव्यथा, किसान की गरीबी, वीरों की गाथा तथा मिलन-विरह के अकृत्रिम भाव इन गीतों में भरे हैं । इनके अतिरिक्त इन गीतों में जीवन का सत्य एवं शाश्वत् रूप भी विद्यमान है ।

लोकगाथा को छोड़कर अन्य लोकगीतों में विस्तृत कथानक का अभाव तथा गेय तत्त्व का प्राधान्य रहता है। संगीत इनका शरीर है और भाव इनकी आत्मा ।

लोकगीत के रचयिता एवं समय के बारे में कुछ ज्ञान नहीं रहता । इन गीतों में कभी-कभी और भी पद जड़ दिये जाते हैं ।

लोकगीतों का अधिकतर मौखिक प्रचार ही होता है । जैसे वेदों को लिखकर पढ़ने से स्वर-अर्थ में व्यवधान होता है, इसीलिए इन्हें श्रुति कहते हैं । इस क्रम में वेदों और लोकगीतों में समानता है । दोनों ही अधिक मात्रा में श्रव्य हैं ।

लोकगीतों की शैली सहज होती है । सभी लोकगीत गेय तत्त्व-प्रधान होते हैं । इनके अतिरिक्त लोकगीतों को आशुरचना कहा जा सकता है । मुख से जब जो स्वर-लहरी फूट पड़ी, वही गीत बन गई । लोकगीतों में पुनरावृत्ति होती हैं । एक टेक पंक्ति प्रत्येक कड़ी में दोहराई जाती है । इनमें परिचित वस्तुओं का ही प्रयोग होता है ।

लोक-संगीत का उद्भव

लोक-साहित्य की परम्परा भारत में अत्यन्त प्राचीन है । संभवतः सृष्टि के आरंभ से ही इसकी परम्परा चल पड़ी है । लोकगीतों का बीज हमारे

1. हिन्दी साहित्य की भूमिका—डॉ० हजारी प्रसाद द्विवेदी

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

प्राचीनतम ग्रन्थ ऋग्वेद में उपलब्ध होता है। प्राच्य साहित्य में जिन गाथाओं का उल्लेख है, उन्हें लोकगीतों का पूर्व-प्रतिनिधि कहा जा सकता है। पद्य या गीत के अर्थ में **गाथा** तथा उसे गाने वाले के अर्थ में **गाथिन्** शब्द का प्रयोग ऋग्वेद के मंत्रों में मिलता है। बहुत पहले किसी विशिष्ट राजा की सराहना में लोकगीत समाज में प्रचलित थे, वे ही गाथा नाम से साहित्य के एक पृथक् अंग के रूप में जाने गये। गृह्यसूत्र में विवाह, सीमन्तोन्नयन तथा यज्ञादि के अवसर पर गाथाएँ गाई जाती थीं। ब्राह्मण तथा आरण्यक ग्रन्थों में भी गाथाओं का वर्णन मिलता है। गाथाओं का संबंध लोकगीतों से बहुत निकट का जान पड़ता है।

विक्रम संवत् की तीसरी शताब्दी में प्राकृत भाषा का बोलबाला था। लोकगीतों की उन्नति भी उस समय बड़े जोर-शोर से हुई। **राजा हाल** या **शालिवाहन** द्वारा संग्रहीत **गाथा सप्तशती** से विदित होता है कि उस समय लोकगीत गाने और बजाने की प्रथा थी। इन गाथाओं में सरस गीति-काव्य की झांकी तथा लोक-साहित्य की माधुरी भी है।

वाल्मीकि रामायण में श्रीराम-जन्म के समय तथा **श्रीमद्भागवत** में श्रीकृष्ण-जन्म के शुभ-अवसर पर स्त्रियों द्वारा मनोरंजक गीत गाने का वर्णन मिलता है। संस्कृत साहित्य में चक्की पीसना, धान कूटना, ढेंकी चलाना, खेती निराना, चरखा कातना, आदि समय में झुण्ड बाँधकर गीत गाने का उल्लेख हुआ है। 12वीं शताब्दी की एक कवियित्री **विज्जका** ने धान कूटनेवाली स्त्रियों के गीत का बड़ा मनोहारी चित्र प्रस्तुत किया है–

विलासमसृणोल्लसन् मुसललोलदोः कन्दली
परस्परपरिस्खलद् वलयनिःस्वनोद्बन्धुराः।
लसन्ति कलहुंकृति प्रसभकम्पितोरः स्थल-
त्रुटद्गमकसंकुलाः कलभगण्डनी गीतयः॥

अर्थात् स्त्रियाँ धान कूट रही हैं और साथ-साथ गीत भी गा रही हैं। मूसल उठाने ओर गिराने के कारण उनकी चूड़ियाँ झन-झन कर रही हैं। उनके वक्षस्थल हिल रहे हैं। मीठी हुंकार की आवाज़ तथा चूड़ियों की खनक से मिलकर उनके गीत विचित्र आनन्द पैदा कर रहे हैं।

महाकवि **कालिदास** ने एक ओर तो **मेघदूत** में यक्ष के घर के वैभव का चित्र खींचा है, दूसरी ओर **रघुवंश** में धान के खेत की रखवाली करने वाली

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

स्त्रियों द्वारा ईख की छाया में बैठकर लोकगीतों के गाने का उल्लेख किया है—

इक्षुच्छायानिषादिन्यः तस्य गोप्तुर्गुणोदयम्
आकुमारकथोद्घातं शालिगोप्योजगुर्यशः ॥[1]

गोस्वामी तुलसीदास के समय विभिन्न संस्कारों के अवसर पर लोकगीत गाने की प्रथा थी। श्रीराम-विवाह के अवसर पर स्त्रियों द्वारा गीत गाने का उल्लेख है—

गावहिं मंगल मंजुल बानी
सुनि कलरव कलकंठ लजानी ।[2]

सोहर छन्द में उन्होंने **रामलला नहछू** की रचना करके लोकगीतों की महत्ता प्रतिपादित की है। रामचन्द्र के विवाह के अवसर पर स्त्रियों द्वारा गाली गाये जाने का उल्लेख भी तुलसीदास ने किया है—

नारि वृन्द सुर जेंवत जानी
लगीं देन गारी मृदुबानी ।

राजा शिवसिंह के दरबार में **विद्यापति** ने 15वीं शताब्दी में मैथिली में मधुर गीत लिखकर रससृष्टि की है।

सर जार्ज ग्रियर्सन ने 1886 ई० में 'Some Bhojpuri Folk-songs' नामक लेख में भोजपुरी के बिरहा, जँतसार, सोहर आदि गीतों का उल्लेख किया है।

पं० राम नरेश त्रिपाठी ने लोकगीतों की परम्परा को देखकर इस पर टिप्पणी करते हुए कहा कि—'वाल्मीकि, भागवतकार, विज्जका और तुलसीदास इनमें से किसी ने यह नहीं बताया कि वे गीत कौन-से थे ? अवश्य ही वे वही कंठस्थ गीत रहे होंगे जो आज भी हैं। समय के अनुसार मात्र इन्होंने भाषा का जामा बदल दिया है। इनके भाव पुराने ही हैं, भाषा भले ही नई हो।[3]'

---

1. रघुवंशमहाकाव्यम्—4।20.
2. रामचरितमानस—बालकाण्ड, दोहा 298 के बाद की चौपाई ॥
3. कविता कौमुदी (सं०)—रामनरेश त्रिपाठी, तीसरा भाग, ग्रामगीत, पृष्ठ सं० 82

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

लोकगीतों की उत्पत्ति के संबंध में कुछ सिद्धान्त इस प्रकार प्रतिपादित किये गये हैं—

(1) आदिमानव ने सर्वप्रथम प्रकृति को देखा । प्रकृति में प्रजनन की शक्ति देखकर उसे सुख और विनाश की शक्ति देखकर दुःख हुआ । दोनों अवस्थाओं में सान्त्वना के लिये की गई भाव-व्यंजना लोकगीत के रूप में परिणत हो गई ।

(2) संतोष और उल्लास ने लोकगीतों को जन्म दिया । आदिमानव ने आनन्दोत्सव में नाचते समय अपनी मण्डली में कुछ लयवद्ध शब्दों का उच्चारण किया जिसे दूसरों ने भी गाकर गीत का नाम दिया ।

(3) परिश्रम के बोझ को हल्का करने के लिये आदिमानव द्वारा जो गुनगुनाहट शुरू हुई उसी से लोकगीतों का जन्म हुआ ।

अतः स्पष्ट है कि लोकगीतों की परम्परा प्राचीन काल से चली आ रही है । कालान्तर में **कबीर, धर्मदास,** आदि सन्तों ने भी लोकगीतों के माध्यम से अथवा लोकगीत-शैली में साहित्य जगत को बहुमूल्य निधियाँ भेंट कीं ।

लोक-संगीत की साहित्यिकता एवं सांगीतिकता

हरी-भरी धरती पर साहित्य की फसल को सरस और उन्नत करने के लिये लोकगीतों का रस-सिंचन आवश्यक है । शास्त्रीय परम्परा की वेड़ियों को तोड़कर साहित्य यदि समाज की धड़कनों में समा जाना चाहता है तो उसे लोकगीतों के सहज, नैसर्गिक भावों का अनुकरण करना आवश्यक है । वस्तुतः भाषा की जटिलता एवं अलंकार की प्रमुखता के कारण काव्य का उपयोग शिष्ट समाज में तो हो सकता है, लोक-समाज में नहीं । **महात्मा गांधी** ने कहा था कि वही काव्य और वही समाज चिरजीवी रहेगा जिसे लोग सुगमता से पा सकेंगे और आसानी से पचा सकेंगे । अतः साहित्य को यदि समूह के साथ विकासगामी होना है तो उसे लोक-समाज और लोक-साहित्य से गठवन्धन करना होगा ।

गाँवों की गली-गली में, हर घर के आँगन में, यदि लोकगीतों की गूंज न होती, उसकी रस-माधुरी से जनसमाज परिचित न होता तो साहित्य को संस्कृति का प्रतीक बनने का श्रेय कतई नहीं मिलता । साहित्य लोकगीतों से ही अनुप्राणित होकर सहजता को प्राप्त करता है और रस का स्रष्टा होता है, क्योंकि लोकगीत अकृत्रिम और स्वयं में पूर्ण हैं ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

लोकगीत गीतिकाव्यों के आरम्भिक और अविकसित रूप हैं। व्यक्तिगत भावों के अतिरिक्त इनमें मानव के समष्टिगत भावों का भी निरूपण होता है। गीतिकाव्यों में इन्हीं का काव्यात्मक रूप परिलक्षित होता है। शब्द और अर्थ के साथ, इनमें संगीतात्मक एवं रागात्मक अभिव्यक्ति, संवेदनशीलता और आत्मीयता है। संगीत एवं काव्य की दृष्टि से लोकगीतों का बड़ा महत्त्व है। समय के प्रत्यावर्तन में काव्य और लोकगीत में बहुधा साम्य आ जाता है। लोक-मानस के स्वाभाविक उल्लास, उमंगें, व्यथा-पीड़ा, परम्परागत रीति-रिवाज तथा काव्य की रसात्मक अनुभूतियाँ लोकगीतों में ही हैं।

स्वाभाविक रचना-प्रणाली के कारण लोकगीतों में व्यंग्य एवं लाक्षणिकता भी है। उपमा, रूपक, उत्प्रेक्षा, श्लेष, अतिशयोक्ति आदि अलंकारों की सुन्दर योजना भी इनमें है। रूपक का एक सुन्दर उदाहरण देखें—

नयन सरोवर, काजर नीर
ढरकि सकल सखि धनिक सरीर।

(1) लोकगीतों में अलंकारों का स्वाभाविक प्रयोग होता है।

(2) इनमें मौलिक अलंकार-विधान होता है। इनके उपमान नवीन एवं मौलिक होते हैं। हिन्दी तथा संस्कृत के प्राचीन कवियों ने आँखों की उपमा खंजन, मीन, मृग तथा कमल से दी है जबकि लोककवि ने इनकी उपमा आम की फाँक से दी है। होठों की उपमा विद्रुम या विम्बफल से न देकर पान के पत्ते से दी गई है।

(3) उपमानों का चुनाव ग्रामीण वातावरण से ही होता है। पेट की उपमा पुरइन के चौड़े पत्ते से और पीठ की उपमा धोबी के पाट से दी गई है।

(4) लोकगीतों में अंलकार-योजना की चौथी विशेषता है, उपमेय से उपमान का आकृति-साम्य। किसी स्त्री के जूड़े की उपमा लाठी के हूरे से तथा किसी के उन्नत ललाट के लिये लोटे का अप्रस्तुत रूप में वर्णन मिलता है। श्लेषालंकार का प्रयोग भी यत्र-तत्र हुआ है। एक पद में 'रस' का प्रयोग 'प्रेम' और 'मधुर' दोनों अर्थों में हुआ है, अतः यमक है। 'भँवरा' शब्द का अर्थ 'पति' और 'भ्रमर' होने से श्लेष है। निर्गुण-सम्प्रदाय के गीतों तथा कुछ अन्य लोकगीतों में प्रतीकों की भी अच्छी योजना की गई है।

लोकगीतों में अलंकार तो मिलते ही हैं, किन्तु रस उनका प्राण है। बिना अलंकार-चमत्कार और शब्दाडम्बर के भी इन गीतों की शैली अनूठी

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

होती है। भाषा रस एवं भाव के अनुरूप होती है। लोकगीतों में प्रायः सभी रसों की अभिव्यंजना है, परन्तु शृंगार एवं करुण रस का प्राधान्य है। वैवाहिक गीतों में कहीं-कहीं हास्य रस का तथा आल्हा में वीर रस का प्रयोग मिलता है। निर्गुण गीतों में शान्त रस और सोरठी के गीतों में अद्भुत रस उपलब्ध होता है। शृंगार रस का विशेप प्रयोग सोहर, झूमर और विवाह-गीतों में हुआ है। करुण रस की योजना बेटी की विदाई, प्रिय-वियोग एवं वैधव्य-वर्णन में की गई है।

लोकगीत तो वस्तुतः वनफूल हैं, जो स्वतंत्र वातावरण में खिलते हैं और विकसित होते हैं। वे जगण, मगण आदि छन्दशास्त्र के नियमों में नहीं पड़ते, न ही मात्रिक एवं वर्णिक छन्दों के फेर में पड़ते हैं। लोक-गीतकार के मानस में जो भावधारा अनायास आ जाती है, उसे ही वह शब्दों में व्यक्त करता है। सुख-दुःख में नगरवासी, ग्रामवासी, धनी-गरीब सबको एक-सी अनुभूति होती है। प्राकृतिक दृश्य एवं ऋतु-सौन्दर्य सबको समान रूप से प्रभावित करते हैं। भारत प्राकृतिक सुषमा से परिपूर्ण देश हैं। यहाँ का वसन्तकालीन सुहाना समय, पेड़ों के झुरमुट में पक्षियों की उन्मत्त प्रेमलीला, झुके-झुके बादल, बलखाती नदियाँ, लहलहाते खेत—सभी कुछ तो काव्य के सौरभ से सुवासित है और इन्हीं में बहती है, संगीत की निर्मल निर्झरिणी !

जीवन के आवश्यक उपादानों की भाँति मीठे नैसर्गिक गीतों का गान भी यहाँ के लोगों के दैनिक जीवन का प्रमुख अंग है। यहाँ के ग्राम्य-गीतों को पुनर्जीवित रखने में लग्न-उत्सवों एवं हिन्दू-त्योहारों का बहुत बड़ा हाथ है। अंगारों से जलते ऊबड़-खाबड़ खेतों में दिन भर काम करके शाम को जब मजदूर घर लौटते हैं तो रात में ढोल, डफ और झाल में खो जाते हैं। इस तरह यहां कदम-कदम पर जीवन के सुनहले एवं मार्मिक क्षणों के गीत उभरते हैं।

लोक-कवि गीतों को रचते समय छन्द-विधान की ओर ध्यान नहीं देते। यही कारण है कि कहीं गीत की पंक्ति बहुत बड़ी हो जाती है, कहीं बहुत छोटी। किन्तु इससे गीतों की गेयता एवं लयात्मकता में कोई बाधा नहीं आती। इन गीतों को गाते समय कहीं ह्रस्व को दीर्घ, कहीं दीर्घ को ह्रस्व कर दिया जाता है तो किसी पद में अक्षरों की कमी होने पर 'हो, रे' या 'रामा' आदि पद जोड़ दिये जाते हैं, जो लोकगीतों के लचीलेपन के प्रमाण हैं।

छन्दों के प्रयोग पर विचार करते हुए आचार्य क्षेमेन्द्र ने सुवृत्ततिलक में

—

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

इस बात पर प्रकाश डाला है कि विभिन्न रसों की अवतारणा के लिये विभिन्न छन्दों का प्रयोग उचित होता है—जैसे संस्कृत में वर्षा एवं प्रवास-वर्णन में मन्दाक्रान्ता छन्द का प्रयोग होता है। लम्वे वर्णनों में घनाक्षरी एवं कवित्त छन्द का प्रयोग होता है, उसी तरह वीर रस के वर्णन में लोकगीतों में आल्हा छन्द का प्रयोग होता है। इसमें गाढ़बन्धता लाने के लिये ट वर्ग, संयुक्ताक्षर आदि का प्रयोग होता है। लय अत्यन्त द्रुत होती है।

लोकगीतों में भाव-व्यंजना एवं छन्द-विधान का प्रचुर सामंजस्य है। संयोग शृंगार के वर्णन में प्राय: झूमर के मार्मिक भावों की अभिव्यंजना के लिये लम्वे छन्दों की आवश्यकता होती है। इसीलिए विप्रलम्भ शृंगार का वर्णन प्राय: जँतसार एवं निर्गुण गीतों में हुआ है। हास्य रस की सृष्टि के लिये संस्कृत साहित्य में 'दोधक छन्द' का प्रयोग होता है जवकि लोकगीतों में 'गोड़ऊ' नामक गीत का प्रयोग किया जाता है। यह गीत गोड़ जाति-विशेष का है। इसकी शव्दावली चलती हुई और लय तीव्र होती है।

लोकगीत प्राय: तुकान्त होते हैं, किन्तु इस नियम का पालन सर्वत्र नहीं होता। पद के अन्त में कहीं समान स्वर मिलते हैं, कहीं समान व्यंजन। भोज-पुरी चैता की प्रत्येक पंक्ति में 'हो रामा' और मैथिली बटगमनी के गीतों में 'सजनि गे' शब्दों की पुनरावृत्ति पाई जाती है। इसी तरह जट-जटिन के गीतों में 'रे जट्टा', 'रे जट्टिन' शब्दों की आवृत्ति होती है। लोकगीतों में प्राय: 'रे ना', 'हो ना', 'आहो रामा', 'कि आहो मोरे रामा', 'ए राम', 'हो राम', 'ए, हो, रे,' आदि पदों की आवृत्ति बहुत अधिक देखी जाती है। कहीं-कहीं पर किसी समस्त पद की पुनरावृत्ति न होकर केवल पदान्त के स्वर या व्यंजन ही समान पाये जाते हैं। बिरहा के गीतों में प्रथम तथा तृतीय और द्वितीय तथा चतुर्थ पंक्तियों में तुक पाया जाता है। मैथिली वटगमनी तथा राजस्थानी लोकगीत में भी तुक का क्रम दूसरी और चौथी पंक्ति में पाया जाता है।

भिन्न-भिन्न लोकगीतों को विभिन्न लय में गाया जाता है। झूमर, होली वहुधा द्रुत लय में तथा सोहर, चैती, जँतसार, निर्गुण गीत वहुधा विलम्बित लयों में गाये जाते हैं। विरहा, आल्हा, लोकगाथा आदि तारस्वर से गाये जाते हैं जवकि सोहर, जनेऊ, विवाह, गवना, जँतसार, रोपनी, सोहनी आदि के गीतों में मन्द्र व मध्य स्वर का प्रयोग होता है।

लोकगीतों के गाने की कई विधियाँ हैं—

[1] **लघु-गुरु का शिथिल बन्धन**—लोक-गीतकार पिंगल-शास्त्र के नियमों में नहीं पड़ते।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

[2] **उपान्त्य स्वर का लुप्त स्वर में उच्चारण**--चरण के अन्तिम अक्षर के ठीक पूर्व वाले स्वर को लुप्त स्वर में उच्चारण किया जाता है। यह नियम विशेष रूप से विरहा में प्रयुक्त होता है।

[3] **स्तोभ की प्रणाली**--स्तोभ का अर्थ है, ऐसी वस्तु या शब्द, जो बीच में जोड़ दिया गया हो। साम-गायन में इसी प्रकार 'पुष्पण' की पद्धति है, जिसका अर्थ है, गीत में नये शब्द जोड़कर उसे अलंकृत करना। लोकगीत में वर्ण-स्तोभ, पद-स्तोभ और वाक्य-स्तोभ के अतिरिक्त माला-स्तोभ का भी प्रयोग होता है।

पद-स्तोभ के उदाहरण लोकगीत में बहुत हैं। चैता और जाँत के गीतों में यह अधिकतर प्रयुक्त होता है। चैता, जिसे 'घाटो' भी कहते हैं, गीतों के प्रारम्भ में 'आहो रामा' और अन्त में 'हो रामा' प्राय: सर्वत्र जोड़ा जाता है।

लोकगीत किसी भी प्रदेश के हों उनमें समान भावधारा, समान सांस्कृतिक, तत्त्व, समान धार्मिक भावना एवं समान सौन्दर्यानुभूति होती है। लोकगीतों में निहित साहित्य एवं संगीत का रसास्वादन समान रूप से विभिन्न प्रदेश के लोग करते हैं।

लोक-संगीत और शास्त्रीय संगीत की पारस्परिकता

संगीत-शास्त्र की दृष्टि से लोकगीतों का बहुत महत्त्व है। शास्त्रीय संगीत के विकास में लोक-संगीत ने काफी योगदान किया है। टप्पा, दादरा, कीर्त्तन भजन आदि लोक-संगीत के ऋणी हैं। ये ताल, लय, गति और स्वर से युक्त हैं। यद्यपि लोकगीतों में संगीत का सर्वांगीण शास्त्रीय रूप नहीं मिलता, किन्तु लोक-संगीत शास्त्रीय संगीत से सर्वथा पृथक् है, यह कहना उचित नहीं है।

इन लोकगीतों में अधिकतर शास्त्रीय परम्परा के कहरवा,दादरा, खेमटा दीपचन्दी (चाँचर) तथा जत तालों का प्रयोग पाया जाता है। जत ताल चौदह मात्राओं का होता है तथा खेमटा छह मात्राओं का। कहरवा ताल के कुछ गीतों में चार मात्राओं का प्रयोग होता है, कुछ में आठ मात्राओं का। सात मात्रा के रूपक ताल का प्रयोग अक्सर चैता तथा सोहर में देखा जाता है। कहरवा तथा दादरा ताल का प्रयोग अस्सी प्रतिशत लोकगीतों में होता है। सोरठी, कजरी, विरहा, पचरा, झूमर, पूर्वी, निर्गुण, पराती, पिड़िया, छठी माता आदि के गीत भी इसमें आते हैं। सोहर, जनेऊ, गवना, गोधन,

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

होली, चैत, जँतसार आदि जत ताल में गाये जाते हैं। विदेसिया दीपचन्दी ताल गाया जाता है किन्तु इनके लिये कठोर नियम नहीं है। एक लोकगीत दो भिन्न तालों में भी गाया जा सकता है; जैसे विदेसिया दीपचन्दी एवं जत ताल में और झूमर कहरवा एवं दादरा दोनों में गाया जाता है।

प्रायः लोकगीतों में चार थाटों का अंश अधिक रूप में उपलब्ध होता है : (1) विलावल, (2) खमाज, (3) काफी, और (4) भैरव थाट।

पंजाब के लोकगीतों में भैरवी और तोड़ी थाट का भी विशेष प्रयोग होता है। कहीं-कहीं भैरव थाट भी मिलता है। बिलावल थाट में एक गीत इस प्रकार है--

समझा के देलऽ भोला अनधन सोनवा
बनवारी हो हमरा के लरिका भतार।
लरिका भतार लेके सुतली ओसरवा
बनवारी हो, जरि गइले एड़ी से कपार।

चैत के गीतों में प्रायः समाज थाट या कल्याण थाट का प्रयोग किया जाता है। काफी थाट का प्रयोग छठी माता तथा होली गीतों में होता है।

लोकगीतों में प्रायः सात शुद्ध स्वरों तथा विकृत कोमल गन्धार एवं कोमल निषाद् स्वरों का प्रयोग मिलता है। शास्त्रीय संगीत की दृष्टि से इन थाटों के राग अपेक्षाकृत अधिक सुग्राह्य होते हैं। कहीं-कहीं कोमल ऋषभ एवं कोमल धैवत् का प्रयोग भी मिलता है। तीव्र मध्यम से युक्त लोकगीत कम हैं। अधिकांश लोकगीतों में तीन, चार या पाँच स्वर ही प्रयुक्त होते हैं, जबकि सम्पर्क बढ़ने के साथ-साथ अब स्वर-परिधि भी बढ़ रही है।

लोकधुनें सरल होती हैं, किन्तु इनमें गायन के सौन्दर्यवर्धक उपकरणों का अभाव नहीं होता। इनमें भी गाते समय खटके, मुर्की तथा मींड आदि का प्रयोग किया जाता है। शास्त्रीय संगीत में अनेक रागों का जन्म भी लोकधुनों से हुआ है। आसावरी, भैरवी, झिंझोटी और पहाड़ी आदि इसके उदाहरण हैं, जिनका मूल स्रोत लोकगीतों में खोजा जा सकता है।

लोकगीत गाने में वाद्य-यंत्र की भी सहायता ली जाती हैं। इनमें ताल-वाद्य हैं—मादल, ढोलक, नगाड़ा, नौवत, डफ, डमरू, खँजरी, आदि। ये अवनद्ध वाद्य भी कहलाते हैं।

तार-वाद्य अथवा तत्-वाद्य में सारंगी, इकतारा और सितार का प्रयोग

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

किया जा सकता है। फूंक के अर्थात् सुषिर-वाद्यों में बाँसुरी, बीन, शहनाई श्रृंगी तथा शंख इन गीतों के सौन्दर्यवर्धन में सहायक होते हैं। वाद्य-यंत्रों के अभाव में चुटकी या ताली बजाकर भी काम चलाया जाता है। उत्तर प्रदेश के पूर्वी जिलों में लोक-संगीत में प्रयुक्त होनेवाले वाद्यों में ढोलक, खँजड़ी, सारंगी झांझ, करताल और जोड़ी मुख्य हैं। झांझ, करताल और जोड़ी घन-वाद्य कहलाते हैं। लोकगीतों में ढोलक सर्वाधिक लोकप्रिय है। विहार और बंगाल में चाँदखोल का भी प्रयोग भी प्रचलित है। झाँझ और ढोलक का लोकगीतों से बड़े निकट का संबंध है। होली और आल्हा गाने में ढोलक का विशेष प्रयोग होता है। गोपीचन और भरथरी की गाथा गानेवाले साईं लोग सारंगी बजा-बजाकर जीविकोपार्जन करते हैं।

महाराष्ट्र में लावनी गानेवाले खँजड़ी का प्रयोग करते हैं। निर्गुण या भजन गानेवाले करताल, कठताल या एकतारा लेकर अपनी कला का प्रदर्शन करते हैं। जोड़ी स्वतन्त्र वाद्य न होकर अन्य वाद्यों की सहायक होती है। राजस्थान में भी विभिन्न प्रकार के वाद्य प्रयोग में आते हैं। बंगाल के 'बाउल' नामक लोकगीत में एकतारा नामक वाद्य का प्रयोग होता है। उत्तरी बंगाल के 'भावैया' और 'चकता' नामक लोकगीतों को गाते समय इस वाद्य-यंत्र का उपयोग होता है। इसमें कहीं-कहीं दो या चार तार भी पाये जाते हैं। खनक या गोपी यंत्र भी बंगाल का एक प्रसिद्ध लोक-वाद्य है। इसमें तार तो एक ही होता है, किन्तु आकृति एकतारा से सर्वथा भिन्न होती है। यह चमड़े से एक ही ओर बन्द रहता है। गवैये काँख में दबाकर इस यंत्र को बजाते हैं। छोटा नागपुर के आदिवासी लोग गीतों को गाते समय नगाड़ों का प्रयोग करते हैं जिसे मृदंग का जनक कहा जा सकता है। रस्सी के सहारे गले में लटकाकर वे छोटी-छोटी लकड़ियों से पीटकर नगाड़े बजाते हैं। इन्हें 'माँदर' भी कहा जाता है। दूसरा वाद्य 'वनम्' है जो एकतारा की तरह ही होता है। बाँसुरी तथा शहनाई का प्रयोग भी यत्र-तत्र किया जाता है।

स्पष्ट है कि लोकगीतों में यद्यपि शास्त्रीय संगीत का संपूर्ण एवं सांगोपांग विवेचन नहीं मिलता, फिर भी शास्त्रीय संगीत के स्वर, थाट, राग और ताल की इनमें समानता है। लोक-संगीत का प्रभाव शास्त्रीय संगीत पर है, अतः दोनों की पारस्परिकता सर्वसम्मत है।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

2

लोकगीतों के प्रकार

लोक-संगीत के अन्तर्गत लोकगीत एवं लोकगाथा हैं किन्तु इनमें स्वरूपगत एवं विषयगत भेद है। लोकगीत आकार में छोटा होता है, लोकगाथा का आकार विस्तृत होता है। आल्हा खण्ड, राजस्थान का ढोलामारू, उत्तर प्रदेश के पूर्वी ज़िले की सोरठी तथा अंग्रेजी की 'द जेस्ट ऑफ रॉबिनहुड' नामक गाथा बड़ी लम्बी है। विषय की दृष्टि से लोकगीतों में विभिन्न संस्कारों, ऋतुओं एवं दैनिक अनुभूतियों के चित्र मिलते हैं जबकि लोकगाथाओं में प्रेमगाथाएं तथा वीरगाथाएं होती हैं।

निस्सन्देह लोकसाहित्य में लोकगीतों की प्रमुखता है। जनजीवन में इनकी व्यापकता एवं प्रचुरता के कारण इनका प्राधान्य उचित है। इनकी कोटियों का वर्गीकरण इस प्रकार किया जा सकता है—

(1) संस्कारों की दृष्टि से,
(2) रस की दृष्टि से,
(3) ऋतुओं एवं व्रतों के क्रम से,
(4) जाति के आधार पर, तथा
(5) श्रम के आधार पर।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

इनके अलावा झूमर, पूर्वी, देवीगीत, खेलगीत, देशभक्तिपरक गीत, भजन, लोरी आदि विविध गीतों में आते हैं। अब हम इनका संक्षिप्त परिचय प्रस्तुत करेंगे।

(1) संस्कार गीत

(क) सोहर : सोहर गीतों को 'मंगलगीत' भी कहते हैं। सोहर शब्द की उत्पत्ति संभवतः 'शोभन' से हुई है। भोजपुरी में 'सोहल' का अर्थ अच्छा लगना किया जाता है। इसकी निरुक्ति 'सुघर' शब्द से की जा सकती है, जिसका अर्थ सुन्दर है। पुत्र-जन्म के अवसर पर गाये जानेवाले ये गीत 'सोहिलो' के नाम से भी प्रसिद्ध हैं। ये सोहर छन्द में बंधे होते हैं। इनमें तुक एवं पिंगल-शास्त्र के नियमों का अभाव होता है। ये गीत बारह दिन गाये जाते हैं। बालक के 'बरही' संस्कार के साथ इनकी समाप्ति होती है। इनका प्रधान विषय गर्भाधान, गर्भिणी की शरीरयष्टि, प्रसव-पीड़ा, दोहद, पुत्र-जन्म आदि हैं। व्रज में इन गीतों को 'सोगर', सोहर' या 'सोहिले' कहा जाता है। भोजपुरी में इसे 'सउरि' भी कहते हैं। राजस्थान में सोहर को 'हालरा' कहते हैं।

(ख) खेलौना : यह पुत्रजन्म के बाद का मंगलगीत हैं—

पुत्रजनम मनभावन, मंगल हम गाइबि हो
ललना जुग जुग जीए मोर ललना
निरखि सुख पाइबि हो।

(ग) मूंडन के गीत : यह संस्कार, पुत्र-जन्म के पहले, तीसरे, पांचवें सातवें तथा अन्य विषम वर्षों में सम्पन्न होता है। इसके पूर्व बालक के बालों का काटना निषिद्ध होता है। इसे संस्कृत में 'चूड़ाकर्म' कहते हैं। **गोस्वामी तुलसीदास** ने महर्षि वशिष्ठ द्वारा राम के चूड़ाकर्म किये जाने का वर्णन **रामचरितमानस** के बालकाण्ड में किया है :

चूड़ाकरन कीन्ह गुरु जाई। विप्रन्ह पुनि दछिना बहु पाई॥

कालिदास ने इसका उल्लेख 'गोदानविधि' के नाम से किया है।

(घ) जनेऊ के गीत : जनेऊ, यज्ञोपवीत का अपभ्रंश है। इसे 'उपनयन' भी कहते हैं। मनु ने ब्राह्मणों के लिये उपनयन का विधान किया है। बुन्देलखण्डी और मैथिली-जनेऊ गीतों में माता-पिता की प्रसन्नता, बालक की

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

बुआ का नेग माँगना आदि विविध विधि-विधानों का उल्लेख है। मैथिली लोकगीतों में जनेऊ के अवसर पर बाँस का मण्डप बनाने का उल्लेख आता है। 'लापर परीछने' अर्थात् ब्रह्मचारी बालक के कटे हुए बालों को आँचल में धारण करने की प्रथा मैथिली तथा भोजपुरी गीतों में वर्णित मिलती है। इस समय पलाश-दंड, मृगछाला और मूँज की करधनी धारण करने का वर्णन भी आया है।

(ङ) विवाह गीत : विवाह गीत वर और कन्या दोनों पक्षों में समान रूप से गाये जाते हैं। वर पक्ष के गीतों में उल्लास और कन्या पक्ष के गीतों में करुणा होती है । भोजपुरी प्रदेश में कन्या पक्ष में विवाह की विधि से सम्बद्ध 24 प्रकार के तथा वर पक्ष में प्राय: 15 प्रकार के गीत सुनने को मिलते हैं। व्रज में विवाह के अवसर पर 24 प्रकार के गीत गाये जाते हैं। मिथिला में विवाह गीतों को 'लग्नगीत' कहते हैं। इस समय 'संमरि' या 'समदाउनि' नामक गीत भी गाये जाते हैं। राजस्थानी विवाह गीतों को 'बनड़े' के नाम से जाना जाता है जिसका अर्थ 'दूल्हा' होता है। अवधी में वर-कन्या के फेरों पर सप्तपदी गीत गाये जाते हैं।

(च) जोग : यह विवाह गीत का ही एक प्रकार है जो कन्या-पक्ष की ओर से गाया गाता है। ऐसा कहा जाता है कि पति के मन को वश में करने के लिये स्त्रियाँ जिस तंत्र-मंत्र का प्रयोग करती हैं, वही 'जोग' कहलाता है।

(छ) सेहरा : इस प्रकार के गीतों में विवाह करने के लिये जाते हुए वर के विभिन्न अंगों एवं वेशभूषा का वर्णन होता है।

(ज) गौना के गीत : गौना शब्द संस्कृत के 'गमन' शब्द का अपभ्रंश है, जिसका अर्थ है, 'जाना'। कन्या की विदाई जब विवाह के दूसरे दिन न करके विवाह के पहले, तीसरे, पाँचवें या ऐसे ही विषम वर्ष में की जाती है तो उसे 'गौना' कहते हैं। गौना के गीतों में पुत्री के प्रति माता-पिता का प्रेम उमड़ आता है । राजस्थान में इन गीतों को 'ओलू' या 'ओलयूँ' कहा जाता है ।

(झ) मृत्यु गीत : इन गीतों में मृत व्यक्ति के गुणों का वर्णन होता है। महाकवि बाण ने हर्षचरित में महाराज हर्षवर्द्धन की बहन राज्यश्री के पति की मृत्यु के उपरान्त इस प्रकार के गीतों के गाने का उल्लेख किया है। उर्दू साहित्य में मृत्यु-गीत या शोक-गीत काव्य की एक विशेष विधा है जिसे

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

'मर्सिया' कहते हैं। अंग्रेजी में इस प्रकार की रचनाओं को 'एलेजी' (Elegy) कहते हैं। यूरोपीय देशों में ऐसे विलाप-गीतों को 'कीन' कहते हैं। दक्षिण इटली के निवासी शोक-गीतों के लिये एक विशेष छन्द का प्रयोग करते हैं। व्रज में चतुर्वेदियों में मृत्यु के अवसर पर स्त्रियों द्वारा जो विलाप किया जाता है, वह संगीतात्मक, लयात्मक एवं अर्थ-संयुक्त होता।

(2) रसगीत

रसों की दृष्टि से गाये जानेवाले गीतों में झूमर श्रृंगार रस के प्रतीक हैं, आल्हा वीर रस के। प्रियतम के प्रवास अथवा बेटी की विदाई पर गाये जानेवाले गीत करुण रस के होते हैं। विवाह के अवसर पर गाली आदि गाने में हास्य रस के गीत गाये जाते हैं।

(3) व्रतों एवं ऋतुओं के गीत

[अ] **नागपंचमी :** यह श्रावण शुक्ल पंचमी को मनाई जाती है। गाँवों में यह 'नागपचैयाँ' नाम से प्रसिद्ध है। इसमें नागदेवता की पूजा कर उनके भोजन के लिये दूध और धान की खील दी जाती है। बंगाल में सर्पों की अधिष्ठात्री मनसा देवी की स्तुति में अनेक ग्रन्थ लिखे गये हैं।

[आ] **बहुरा :** भाद्र कृष्ण चतुर्दशी को पुत्र-प्राप्ति तथा पति-कल्याण लिये स्त्रियाँ यह व्रत करती हैं।

[इ] **गोधन :** कार्तिक शुक्ल प्रतिपदा के दिन बहन द्वारा भाई की शुभकामना के लिये यह व्रत किया जाता है। यह शब्द 'गोवर्धन' का अपभ्रंश है।

[ई] **पिड़िया :** यह व्रत कार्तिक शुक्ल प्रतिपदा से अगहन शुक्ल प्रतिपदा तक एक मास मनाया जाता है। **श्रीमद्भागवत्** में इस व्रत को 'कात्यायनी' या 'हेमन्त' व्रत भी कहा गया है। भाई की मंगलकामना के लिये बहनें यह व्रत करती है। इसमें लड़कियाँ रात को उठकर पिड़िया (गोबर का पिण्ड) लगाती हैं और उनके भाई पूजा का सामान जुटाते हैं।

[उ] **छठ गीत :** बंध्या स्त्रियाँ पुत्र-प्राप्ति के लिए अथवा पुत्रवती स्त्रियाँ संतान की मंगलकामना के लिये कार्तिक शुक्ल षष्ठी को छठी माता का व्रत करती हैं—

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

कातिक मासे छठिया व्रत लागेला
भूखेली बाचा के माई,
ए छठी मइया ।

इसे सूर्य-षष्ठी व्रत भी कहते हैं । कुष्ठ रोग-निवारण तथा किसी भी मनोकामना की पूर्ति के लिये यह व्रत किया जाता है ।

ऋतु-गीतों की चर्चा हम बाद में करेंगे ।

(4) जातिपरक गीत

[क] बिरहा : यह अहीरों का राष्ट्रीय गीत है । लोकगीतों में बिरहा आकार में सबसे छोटा, किन्तु अत्यन्त प्रभावशाली गीत है ।

[ख] पचरा : दुसाधों में कोई व्यक्ति जब प्रेत-बाधा से पीड़ित होता है तो 'पचरा' गाकर देवी का आवाहन किया जाता है । तभी वह व्यक्ति स्वस्थ होता है ।

गड़ेरियों के निजी गीत होते हैं । किसानों के खेतों में अपनी भेड़ों को भेजकर वे मस्ती में गाते हैं ।

गोड़ जाति के गीतों को 'कहरवा' कहते हैं । तेलियों के गीतों में तैलिक जीवन का चित्रण होता है, इन्हें 'कोल्हू के गीत' कहते हैं । चमारों के जातीय गीतों में समाज पर चुभता हुआ व्यंग्य होता है । 'उफरा' और 'पिपिहरी' वाद्य-यंत्रों की सहायता से ये गीत आकर्षक हो जाते हैं ।

(5) श्रमगीत

कोई काम करते समय थकावट मिटाने के लिये गाये जानेवाले गीतों जँतसार, रोपनी, सोहनी, चरखा आदि के गीत हैं, जिन्हें श्रमगीत कहते हैं ।

इनके अतिरिक्त देवी-देवता संबंधी गीतों में शीतला माता, गंगाजी, तुलसीजी के गीत प्रसिद्ध हैं । बच्चों के खेल गीत, पालने के गीत तथा लोरी-गीत बुन्देलखण्ड में अधिक पाये जाते हैं । अंग्रेजी साहित्य तथा हिन्दी की विभिन्न बोलियों में भी लोरियों की संख्या अनन्त है ।

अन्य प्रान्तों के कुछ लोकगीत :

उड़ीसा (उत्कल) का एक लोकगीत

राम हेला जल् सीता हेला लहुड़ी,
राम हेला मेघ सीता हेला घड़घड़ी,

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

राम हेला दही सीता हेला लहुणी,
राम हेला घर सीता हेला घरणी।

–राम जल हो गए और सीता जलतरंग। राम बादल हो गए और सीता बिजली। राम दही बन गए, सीता मक्खन। राम घर बन गए, सीता घरवाली।

बंगला का एक बाउलगान :

तुइ की मानस मुकुल भाजबि आगुने
तुइ की फुल फोटाबी फलावि शबुर विहने ?

—क्या तू मन की कली को आग पर भून डालेगा ? या तू फूल खिलाएगा, फल पकाएगा सब्र के बिना ?

गुजरात का काठियावाड़ी सोरठा :

कापड़ फाटिउँ होय एनें ताणो लई ने तुनिएँ
कालज फाटियाँ होय ई कोई काले संधाये नहीं।

कपड़ा फटा हो तो उसे रफ़ू कर लें, धागा लेकर। कलेजा फटा हो तो यह किसी भी रीति से नहीं जुड़ता।

खेलगीत भोजपुरी, अवधी तथा ब्रज में बहुत प्रचलित हैं। इन्हें आसाम में 'आई नाम', गुजरात में 'होलरडा', मराठी में 'अंगाई गीत', कन्नड़ में 'जोगुल हाड्ड' और उड़िया में 'विल्ला खेलो गीतो' कहते हैं।

मौसमी गीत अथवा ऋतुगीत

मौसमी अथवा ऋतुगीत कई प्रकार के होते हैं, किन्तु उनका लक्ष्य मिलन और विरह के भावों पर ही केन्द्रित होता है।

कालिदास ने ऋतुसंहार में चूंकि ग्रीष्म ऋतु पर प्रथम दृष्टि-निक्षेप किया है, इसलिए हम भी पहले ग्रीष्म पर ही विचार करेंगे।

राजस्थानी लोकमानस ने एक स्थान पर ग्रीष्म ऋतु का हृदयग्राही चित्रण किया है, देखिए—

कह लूवां कित जावस्यो
पावस घर पड़ियाँह

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

हिये नवोरा नार रा
बालम बीछड़ियाँह ।

—कहो हे लू, तुम कहाँ जाओगी, जब धरती पर पावस ऋतु आ जाएगी ? हम उस नववधू के हृदय में जाकर रहेंगी, जिसका बालम बिछुड़ गया हो ।

पावस गीत

लोकगीतों में पावस-सम्बन्धी गीतों में कजरी का विशेष स्थान है। मिर्जापुर की कजरी विख्यात है। वहाँ रात-रात भर कजरी के दंगल होते हैं। मिथिला में 'कजरी' से मिलता-जुलता गीत 'मलार' है। सावन-भादों के महीने में व्रज में 'मोरा' गीत गाये जाते हैं। बिहार का एक कजरी गीत देखें—

दादुर बोले मोर पपीहा
डारी डारी ना
सखी हो सैंया घरे ना अइले
सावन बरसे लागल ना ।

पावस के अन्य गीतों में 'चौमासा' तथा 'बारहमासा' आते हैं। प्रोषित-पतिका नायिका के बारह मासों के मनोभाव या बरसात के चार मास का वर्णन इन गीतों में होता है । बारहमासा अधिकतर आषाढ़ मास के वर्णन से आरम्भ होकर ज्येष्ठ में समाप्त होता है ।

होली

होली, आनन्द और मस्ती का एक ऐसा लोकप्रिय राष्ट्रीय त्योहार है जिसे चारों वर्णो के लोग बड़े उत्साह से मनाते हैं। चूंकि यह फाल्गुन महीने में पूर्णिमा-प्रतिपदा को मनाया जाता है, इसलिए इसे 'फगुआ' या 'फाग' भी कहते हैं। यों, माघ, मास की शुक्ल पंचमी, यानी वसन्त पंचमी, के दिन से ही गाँवों में 'फगुआ' आरम्भ हो जाता है, अबीर-गुलाल का प्रयोग होने लगता है। इसे भोजपुरी में 'तालठोंकना' भी कहते हैं। होली के पहले दिन लोग मजहबी कैद तोड़कर होलिका-दहन के लिये किसी निश्चित स्थान पर कुछ लकड़ियाँ आदि इकट्ठी करके जलाते हैं, जिसे 'समत' या 'संवत् जलाना' कहते हैं।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

इस समय ढोल, डफ, मृदंग, झाल के स्वर गूंज उठते हैं। अबीर-गुलाल की धूल से आसमान लाल हो उठता है—

उड़त गुलाल लाल भयो अम्बर,

और गुलाबी जाड़े की रात में एक मस्ती भरा गीत गूंज उठता है—

फागुन मस्त महीना हो लाला।

दूसरे दिन लोग सड़कों पर, गलियों में धुरखेली आरम्भ करते हैं। बिहार के गया क्षेत्र में होली के एक दिन बाद तक रंग का त्योहार होता है जिसे 'झूमटा' कहते हैं। होली के बाद वाले मंगलवार को भी इस त्योहार में शामिल समझा जाता है जिसे 'बुढ़वामंगल' कहते हैं। इस दिन भी अबीर-गुलाल का प्रयोग होता है।

होली के गीतों में कहीं राधा-कृष्ण होली खेलते दिखाई पड़ते हैं, कहीं शिवजी होली का आनन्द ले रहे हैं, कहीं पवनपुत्र हनुमान लंका में होरी मचाते हुए पाये जाते हैं तो कहीं राम और सीता सोने की पिचकारी में रंग भरकर एक-दूसरे पर डाल रहे हैं—

होरी खेले रघुवीरा अवध में होरी
राम के हाथ कनक पिचकारी
सीता के हाथ अबीर।

होली की मस्ती में हास-परिहास के लिये बड़े-छोटे, ऊँच-नीच का भेद नहीं रहता। इस समय गाली गाने की भी प्रथा है। इस तरह के गीतों को 'जोगीड़ा' या 'कबीर' कहते हैं। पूर्वी उत्तर प्रदेश और बिहार में होली के अवसर पर कुछ अश्लील गीत गाये जाते हैं, इन्हीं को 'जोगीड़ा' कहते हैं। कभी-कभी इस तरह का गीत गानेवाले किसी लड़के को स्त्री रूप में सजाकर नाच भी कराते हैं। 'जोगीड़ा' के बाद 'कबीर' गाते हैं जो अत्यन्त अश्लील होते हैं। गवैयों के दल गाँव के एक द्वार से दूसरे द्वार पर विदा होने के समय यह मंगलगीत गाते हैं—

सदा आनन्द रहे एहि दुआरे
मोहन खेले होरी।

होली के गीतों में गंभीर और सूक्ष्म भावों के स्थान पर सार्वजनिक आल्हाद् का व्यापक भाव रहता है। यों होली के गीतों में संयोग शृंगार का

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

ही प्राधान्य होता है किन्तु ब्रज के एक कवि **पतोला** ने जीवन के अन्य पक्षों को भी इन गीतों में चित्रित किया है–

फागुन में परयो तुसार, चैत में उखटा
कां तें रंगाय देउँ दुपटा ।

सूरदास ने **सूरसागर** में, **चतुर्भुजदास** ने तथा **कुंभनदास** ने अपने पदों में होली खेलने या गाने के प्रसंग में नाना प्रकार के वाद्यों, उपादानों एवं स्थलों का वर्णन किया है ।

अष्टछाप के कवियों ने फागुआ माँगने की प्रथा का भी उल्लेख किया किया है । 'फगुआ' फाग खेलने के उपलक्ष में प्राप्त उपहार है । गोपियाँ कृष्ण से कहती हैं कि यदि फगुआ न दे सको तो राधा के पैर छुओ । फगुआ मिलने पर वे गाली न देने का आश्वासन देती हैं । ब्रज में—विशेपरूप से नन्द गाँव, बरसाने में—यह परम्परा अब भी है कि होली के अवसर पर स्त्रियाँ पुरुषों पर डण्डे बरसाती हैं । इसे 'लट्ठमार होली' भी कहा जाता है । सूरदास की राधा छड़ी लेकर कृष्ण को मारने के लिये दौड़ती हैं—

लै लै छरी कुमारी राधिका, कमलनयन पर धाई ।

मीरा ने स्वयं को कृष्ण के साथ होली खेलने के लिये पात्री बनाकर अपनी विरह-व्यथा व्यक्त की है—

होरी पिया बिनु लागां खारी ।

रसखान का भी होली-अनुभाव बड़ा सुन्दर है । बरसाने और नन्द गाँव की होली के बारे में एक 'रसिया' देखें—

बरसाने में सामरे की होरी रे
नन्द गाम को कुमर कन्हैया
बरसाने की गोरी रे ।

ब्रज में खयालों के माध्यम से होली-गायन-पद्धति प्रचलित है । होली और धमार में केवल तालों का अन्तर है । फाग-संबंधी पदों को खयालिये दीपचंदी, त्रिताल आदि तालों में गाते हैं ।

रीतिकालीन कवियों ने राधा-कृष्ण की होली का सजीव वर्णन किया है । सन्त-कवियों ने होली के माध्यम से साधना और योग का उपदेश दिया है । **सन्त भीखादास** कहते हैं—

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

मन में आनन्द फाग उठो री
इंगला पिंगला ताना देवे
सुखमन गावत होरी ।

होली की स्थानीयता

उत्तर प्रदेश में ढोलक होली और झाल के साथ गाई जाती है। राजस्थान में होली के अवसर पर एक विशेष प्रकार का नृत्य होता है जिसे 'लूर', 'लूवर' या 'घूमर' कहते हैं। इसमें स्त्रियाँ गोलाकार रूप में एक-दूसरे का हाथ पकड़ कर नाचती हैं। राजस्थान के ब्यावर नगर में होली के दस दिन पहले पंचमी से 'गैर नृत्य' चलने लगता है। होली के दूसरे दिन धुलैंडी से सात-आठ दिनों तक विभिन्न स्थानों पर यह नृत्य होता है। ढोल की थाप पर प्रस्तुत नृत्य 'डाका' कहलाता है और डंडे की ताल पर नाचने वालों को 'चिट्ठिये' कहा जाता है।[1]

'विरहिन के जिया घबराने, फगुनवा नियराने' नामक लेख में **डॉ० रहमत उल्लाह** ने फागुन के चौताल गीत को विशेष महत्त्व दिया है।[2] चार ताल के इस लोकगीत को कुछ व्यक्ति दो वर्गों में विभक्त होकर जोड़-तोड़ के आधार पर ड्योढ़ी लगाकर गाते हैं।

बुन्देलखण्ड में टीकमगढ़ के निकट मिनौरा गाँव के सुन्ना और चतुरा जाति के पुरुष स्त्री-वेश धारण किये हुए आते हैं। इनकी टोली में चमार, लुहार, धोबी, कुम्हार आदि रहते हैं। कोई ढोल बजाता है, कोई मजीरा। कोई नाचता है, कोई गाता है—

नई गोरी नये बालमा, नई होरी की झाँक
ऐसी होरी दागियो, तोरे कुल कौं न आवै दाग
सम्हरि के यारी करौ मोरे बालमा ।

बुन्देलखण्ड के फाग-गीत कई प्रकार के होते हैं—चौकड़याऊ, छंदयाऊ,

---

1. 'बादशाह होली में बीरबल नाचे' —सावित्री परमार, 'धर्मयुग', अंक 19 मार्च, 1978।
2. 'धर्मयुग', अंक वही ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

डिड़खुरयाऊ, साखी आदि। इनमें ईसुरी की चौकड़याऊ फागें, यानी चतुष्पदी, प्रसिद्ध हैं।

होली के अवसर पर गाये जानेवाले गीत होली, फाग, फगुआ, वेलवइया और चौताल के नाम से प्रसिद्ध हैं किन्तु इस अवसर पर अवध में 'रेखता' नामक विशेष प्रकार के गीत गाये जाते हैं। रेखता गानेवाले लोग एक हाथ में मोरछल लिये रहते हैं और दूसरे हाथ से गीत के साथ उसे ठोंककर ताल देते हैं।

व्रज में 'होली' और 'रसिया' गाये जाते हैं। वहाँ होली के दो भेद किये गये हैं–(1) साधारण होली, और (2) राजपूती होली। साधारण होली में श्रृंगारिक भावों का उत्साहपूर्ण वर्णन होता है, जबकि राजपूती होली सशक्त एवं उग्र स्पन्दन से परिपूर्ण होती है। कहीं-कहीं होली गीतों में सामाजिक कुरीतियाँ भी चित्रित हुई हैं। बाल-विवाह पर एक आक्षेप देखें––

बारो बलमा रे बारो बलमा
तगड़ी ए घर नारि के बारो बलमा।

कौरवी प्रदेश में होली मात्र ऋतुगान ही नहीं, अपितु सर्वकाल और समस्त विषयों को लेनेवाली तर्ज है। यहाँ होली का एक प्रकार 'पटका' भी है जिसमें स्त्रियाँ मंडलाकार घूमती हुई एक-दूसरी के हाथ पर हाथ मारती हुई गाती हैं।

गंगा के उस पार की होली में अपेक्षाकृत अधिक सहज उल्लास मिलता है। मिथिला के फाग या होली के त्योहार पर वैष्णव धर्म का प्रभाव है।

मौसमी गीतों के अन्तर्गत चैती गीतों का विस्तृत परिचय हम आगे देने जा रहे हैं। इन ऋतु—गीतों के भावों की तुलना करते हुए **डॉ० जयकान्त मिश्र** ने कहा है– "Chaita' and 'Phagu' songs are full of colourful love, but 'Malara' and sometimes 'Basanta' display highly poetic sentiments.[1]'

लोकगीतों का एक प्रकार : चैती

चैत के माथे पर अबीर का टीका लगाकर फागुन विदा होता है।

---

1. An Introduction to the folk literature of Mithila.
—Dr. Jaikant Mishra

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

फाल्गुन पूर्णिमा यानी होली के दिन रात बारह बजे से चैता गाना आरम्भ हो जाता है।

चैत के महीने में गाये जाने के कारण इस गीत का नाम 'चैता' या 'चैती' पड़ गया है। वैसे चैती गीतों की नींव बसन्त में पड़ जाती है पर चैत के पहले चैती गीतों को गाने की प्रथा लगभग नहीं है। वसन्त की बहार चैत मास तक बनी रहती है। इस समय चैता के माधुर्य का क्या कहना ? नदी के तीर पर, घनी अमराइयों में, जहाँ देखो वहाँ, चैता की धुनें कानों में अमृत उँडेलने लगती हैं। भोजपुरी में इसे 'घाटो' या 'घाँटो' भी कहते हैं। मैथिली में इन्हें 'चैतावर' तथा मगही में 'चैतार' कहा जाता है। लोकगीतों के अन्य जितने भी प्रकार हैं, उनमें माधुर्य सरलता एवं कोमलता के लिहाज से चैती वेजोड़ है।

मैथिली के चैतावर गीत-शैली की रसीली स्वर-लहरी श्रोताओं के मन को पहरों तक नहीं डिगने देती। चैत के महीने में ये एक कण्ठ से दूसरे कण्ठ में रुई से रोएँवाले सेमल पुंखपत्र की भाँति दल के दल उड़ते फिरते हैं और वसन्त ऋतु की मस्ती एवं रंगीन भावनाओं का अनोखा सौन्दर्य भरकर इस गीत-शैली की अभिव्यक्ति में ताने-बाने का काम करते हैं[1]।

भोजपुरी के चैता गीत वशीकरण मंत्र की भांति अत्यन्त सरस, मर्मस्पर्शी एवं मनमोहक होते हैं। चैत के महीने में हर रात ग्रामीण लोग ढोलक, झाल लेकर चैतार गाते हैं। इसमें शृंगार-वर्णन की प्रधानता रहती है तथा अधिकतर वसन्त ऋतु का भावोच्छ्वास निहित रहता है। 'हो रामा', 'रामा' आदि इसके टेकपद हैं। जीवन के मधुरतम भावों के साथ यह चैतार करुण रस से भी आप्लावित हैं। चैती गीतों की प्रतीक-योजना हृदय को प्रभावित किये बिना नहीं रहती।

वसन्तोत्सव के प्रतिरूप :
फाग और चैती

वेदों से विदित होता है कि चतुर्मास्य के अन्तर्गत वैश्वदेव पर्व मनाया जाता था जो फाल्गुनी पूर्णिमा को अनुष्ठेय पर्व है। इस तरह के अनुष्ठान के

1—मैथिली लोकगीत : रामइकबाल सिंह 'राकेश', पृ० 309.

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

अन्तर्गत आहिताग्नि नये अन्न को खाता है। यही पर्व कालान्तर में होलिकोत्सव के रूप में परिणत हो गया। यह पर्व वसन्त से सम्बद्ध है।

वसन्तोत्सव का महत्त्व संपूर्ण संसार में है। शीतकाल की जड़ता के वाद प्रकृति नया शृंगार करके लोगों को मोहती है। प्राचीन काल में वसन्त से ही नया वर्ष आरंभ होता था। हिन्दी माह के अनुसार चैत का महीना वर्ष का प्रथम मास है, किन्तु कालिदास ने 'ऋतुसंहार' में अपना ऋतु-वर्णन ग्रीष्म से आरम्भ किया है। इस तरह वसन्त आते-आते वर्ष की समाप्ति एवं आरम्भ का सन्धिकाल आ जाता है। यह सन्धि हिन्दी के फागुन और चैत महीनों की भी सन्धि है।

प्राचीन परम्परा से वसन्तोत्सव की प्रथा प्रचलित है। दूसरी शती में **जैमिनी** ने **मीमांसादर्शन** में 'होलिकाधिकरण' नामक एक अध्याय जोड़कर इस लौकिक त्योहार का आर्यीकरण किया। **वात्स्यायन** के कामसूत्र में इस उत्सव का नाम 'होलाका' दिया गया है[1]। टीकाकार **जयमंगल** कहते हैं कि इस अवसर पर पिचकारी द्वारा किंशुक आदि फूलों के संभार से वना हुआ रंग छोड़ने की प्रथा थी। पुराणों में वसन्त को कामदेव का सहायक माना गया है। **मत्स्य पुराण** में चैत्र शुक्ला द्वादशी को 'मदनद्वादशी' कहा गया है। उस दिन सौभाग्य-प्राप्ति के लिये व्रत किया जाता है। **भविष्य पुराण** में मदनोत्सव अर्थात् चैत्रोत्सव चैत्रमास की त्रयोदशी को मधुमास में मनाया जाता है। इस अवसर पर सिन्दूर द्वारा कामदेव और रति की आकृतियाँ वनाकर उनका पूजन किया जाता है।[2]

कालिदास के अनुसार, वसन्तोत्सव में आम्र-मंजरियों से कामदेव की पूजा की जाती थी। फाल्गुन पूर्णिमा के दिन लोग खुले मैदानों में पूर्ण चन्द्र का आनन्द लेते हुए उत्सव मनाते थे **दशकुमारचरित**, भास के **चारुदत्त**, **भवभूति** के **मालतीमाधव** तथा **हर्ष** की **रत्नावली** में मदन-महोत्सव यानी होली-उत्सव का वर्णन है।

वसन्तोत्सव का ही रूप 'फगुआ', 'होली' या 'होरी' है। वसन्त पंचमी के दिन कामदेव का जन्म माना जाता है। संभवतः इसीलिए वसन्त पंचमी से लेकर चैत्र पूर्णिमा तक वसन्तोत्सव मनाया जाता है। इसी के अन्तर्गत फगुआ,

---

1. कामसूत्र : वात्स्यायन, 1।4।42.
2. 'राजन सों खेलें रंक, रंकन सो राजा राव' : गोपाल प्रसाद व्यास, 'कादम्बिनी', अंक मार्च 1979.

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

होरी आदि गाये जाते हैं। वसन्त-गीत का ही एक प्रकार चैता है। वसन्त से संबद्ध होने के कारण इनमें श्रृंगार की अधिकता होती है।

हिन्दी के अनेकानेक काव्य वसन्त के विविध वर्णन से परिपूर्ण हैं, किन्तु संत-काव्य में वसन्त-काव्य का जो वर्णन आया है उससे एक चैती गीत का कैसा साम्य है, यह निम्न उदाहरणों से स्पष्ट हो जाता है।

सन्त दरियादास का वसन्त-वर्णन है––

बेलि चमेली विविध फूल
सीधा अग्र गुलाब मूल
भँवर कँवल में भाव भोग।

और यह चैती गीत देखें––

बेला फूले चमेली फूले
अवरू फूलेला कचनरवा हो रामा
गेंदवा जे फूले माघ रे फगुनमाँ
चैत मासे फूलेला गुलबवा हो रामा।

फागुन और चैत्र मास संयोग में अनुकूल और सुखद हो जाते हैं। फागुन होली के कारण सरस है तो चैत्र वसन्त के कारण। चैत्र मास के गीतों का सृजन वासन्तिक सुषमा के निरूपणार्थ होता है। यह दूसरी बात है कि कवियों ने उनमें श्रृंगारिक वर्णनों का समावेश करके, इतर वस्तुओं को वर्ण्य-विषय बनाकर उन्हें इतिवृत्तात्मक बना दिया है।

वसन्त को 'मधु-ऋतु' की संज्ञा दी गई है। ऋतुओं में श्रेष्ठ होने के कारण इसे 'ऋतुराज' की भी संज्ञा दी गई है। फागु-काव्य का सूत्रपात इसी ऋतु से हुआ है। फागु-काव्य मूलतः वसन्त-काव्य था जो चैत्र और फाल्गुन में गाये जानेवाले गीतों के रूपों में प्रचलित था। वसन्तोत्सव ऋतु-परिवर्तन से संबंधित उत्सव है। इस उत्सव को कामसूत्र में 'सुवसन्तक' और सीतावेग कन्दरा के शिलालेख में इसका नाम 'दुले वसंतिया' दिया गया है।

होली और चैती वस्तुतः कृषियुग की देन हैं। हमारे यहाँ जितने भी उत्सव होते हैं सभी का संबंध किसी-न-किसी रूप में ऋतु-परिवर्तन और फसल कटने से अवश्य रहा है। गढ़वाल में फसल को माड़ते समय बैलों का चक्कर

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

'दाई का फेरा' कहलाता है। इसी से ऋतु बदलने की उपमा दी जाती है--

आई गैन ऋतु बौड़ी, दाई जैसी फेरो, झुमैलो।

यहाँ वसन्त ऋतु का संकेत है। **कोषी तकि ब्राह्मण** के अनुसार, शीत काल में बोई गई फसल चैत मास में पक जाती थी और इसी अवसर पर फाल्गुनी पूर्णिमा का वैश्वदेव पर्व मनाया जाता था जिसकी चर्चा हम पीछे कर आये हैं।

वर्षक्रिया-कौमुदी में शैवागम विचारधारा का वर्णन करते हुए बताया गया है कि चैत्र शुक्ला चतुर्दशी को मदनमहोत्सव में प्रातःकाल से एक प्रहर तक संगीत और वाद्य के साथ शृंगारिक अपशब्दों को वोलते हुए कीचड़ उछाला जा सकता है।

फागुन और चैत दोनों महीने क्रमशः वर्ष-समाप्ति और वर्ष-प्रारंभ के महीने हैं। अतः दोनों का आपस में घनिष्ठ सम्बन्ध है। विभिन्न प्रदेशों के बारहमासों में फागुन और चैत का वर्णन लगभग समान ही है।

शान्ति निकेतन जो भारतीय सांस्कृतिक चेतना का दर्पण है, में वसन्तोत्सव का उल्लास वसन्त पंचमी से ही आरम्भ हो जाता है, लेकिन उसका पूरा उल्लास दोलोत्सव (फाल्गुन पूर्णिमा की बंगाली होली) में ही देखने को मिलता है। यदि मार्च के तीसरे सप्ताह तक इस पूर्णिमा का आगमन नहीं होता तो वसन्त में खिलनेवाले फूलों का वैभव चुकने लगता है। तब दोल-पूर्णिमा फाल्गुन पार करके चैत में मनाई जाती है।[1]

लोक-संगीत के अन्तर्गत फाग और चैती वसन्तोत्सव के ही प्रतिरूप हैं, क्योंकि इनसे संबद्ध साहित्य में अथवा गीत में वसन्त को लाँघकर कोई वर्णन नहीं किया जा सकता। वसन्त की मादकता होती है और अमराइयों में गूंजने लगते हैं फाग और चैती के मीठे-मीठे गीत ! साहित्यिक एवं सांगीतिक दोनों दृष्टियों से होली और चैती सहोदरा बहनों की तरह जुड़ी प्रतीत होती हैं।

---

1. शान्ति निकेतन में दोलोत्सव : डॉ॰ रणजीत कुमार साहा, 'धर्मयुग', अंक 14 मार्च, 1976.

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

3

चैती का स्वरूप : एक साहित्यिक पर्यवेक्षण

चैत्र शब्द चित्रा में अण् प्रत्यय के योग से बना है। यह एक चान्द्रमास का नाम है जिसमें चन्द्रमा चित्रा नक्षत्र में स्थित रहता है। यह महीना अंग्रेजी के मार्च-अप्रैल महीने में पड़ता है। इससे बननेवाले अन्य पद हैं—चैत्रीः (चैत्रा + इञ्), चैत्रिकः (चित्रा + इक्) और चैत्रिन् (चित्रा + इनि)। इन सभी शब्दों का अर्थ चैत्रमास होता है। चैत्री (चित्रा + अण् + ङीप्) का अर्थ चैत्रमास की पूर्णिमा है। लोकभाषा का चैती शब्द इसी चैत्री का अपभ्रंश कहा जा सकता है।

महाकवि कालिदास ने ऋतुसंहार के षष्टम् सर्ग में चैत्रमास का प्रयोग मधुमास कह कर किया है–

आलम्बिहेमरसनाः स्तनसक्तहारा
कंदर्पदर्पशिथिलीकृतगात्रयष्टयः ।
मासे मधौ मधुरकोकिलभृङ्गनादैः
नार्यो हरन्ति हृदयं प्रसभं नराणाम् ।[1]

1. ऋतुसंहार, 6/26.

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

—'चैत में जब कोयल कूकने लगती है, भौंरे गुंजार करने लगते हैं, उस समय कमर में सोने की करधनी बाँधे, स्तनों पर मोती के हार लटकाए और कामोत्तेजना से शिथिल शरीरवाली स्त्रियाँ बलपूर्वक लोगों का मन अपनी ओर खींच लेती हैं।'

चैत की सुहानी संध्या, शुभ्र चांदनी और कोकिला के मादक स्वर का वर्णन करते हुए कालिदास कहते हैं–'चैत मास की वासन्तिक सुषमा से परिपूर्ण लुभावनी शामें, छिटकी चाँदनी, कोयल की कूक, सुगन्धित पवन, मतवाले भौंरों की गुंजार और रात में आसव-पान—ये शृंगार-भाव को जगाये रखने वाले रसायन ही हैं[1]।'

चैत की रातों का शृंगार-भाव बहुचर्चित है। वन्सत का अवसानकाल इन्हीं रातों के साथ होता है, इसलिए शृंगार का सम्मोहन बढ़ जाता है। काव्यप्रकाशकार **आचार्य मम्मट** ने काव्य की परिभाषा के क्रम में एक श्लोक उद्धृत किया है जिसमें एक नायिका के मनोभावों का चित्रण है : कभी वह अपने प्रिय से रेवा नदी के किनारे, मालती और कदम्ब की वायु से सुरभित वेतसी वृक्षों के नीचे छिप-छिपकर मिला करती थी। आज वह अपने प्रिय की प्रेयसी न रहकर भार्या बन चुकी है किन्तु चैत की रातों में चोरी-चोरी फिर वैसे ही मिलन की उत्कंठा उसे हो रही है—

यः कौमारहरः स एव हि वरः ताः एव चैत्रक्षपाः
ते चोन्मीलितमालतीसुरभयः प्रौढ़ाः कदम्बानिलाः।
सा चैवास्मि तथापि तत्र सुरतव्यापार लीलाविधौ
रेवारोधसि वेतसी तरुतले चेतः समुत्कण्ठते ॥[2]

यहाँ रस के साथ-साथ विभावना अलंकार भी है क्योंकि कारण न रहने पर भी यहाँ कार्य की उत्पत्ति दिखाई गई है।

एक सुभाषित ग्रन्थ में चैत्रमास के सौन्दर्य एवं विरहीजनों के लिये इस समय की कष्टकर स्थिति का वर्णन किया गया है–

स्तोत्रं चैत्रगुणोदयस्य विरहि प्राणप्रयाणानक–
ष्टंकारः स्मरकार्मुकस्य सुदृशां शृंगार शिक्षागुरुः।

---

1. ऋतुसंहार, 6/35.
2. हिन्दी काव्यप्रकाश : डॉ० सत्यव्रत सिंह, पृष्ठ 12.

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

दोलाकेलिकलासु मञ्जुलपदं बन्दी वनान्तश्रियां
नादोयं कलकण्ठ कण्ठकुहरे प्रङ्खोलित: श्रूयते ।।[1]

रीतिकालीन कवि बिहारी ने भी चैत की चाँदनी से उत्पन्न विरह-वेदना का चित्रण किया है--

भौ यह ऐसोई समौ जहाँ सुखद दुख देत
चैंत चाँद की चांदनी डारत किये अचेत ।[2]

चैत मास के कुछ विशेप लक्षणों को देखते हुए किसानों के लिये जो ज्योतिष-गणना हुई है, उसका वर्णन पं रामनरेश त्रिपाठी ने अपने ग्राम-साहित्य में किया है । कुछ उदाहरण देखें—

चैत पूर्णिमा होई जो सोम गुरौ बुधवार
घर-घर होय बधावड़ा घर-घर मंगलचार ।

अर्थात् चैत की पूर्णिमा को यदि सोमवार, बुधवार या वृहस्पतिवार हो तो घर-घर मंगलचार होगा ।

चैत मास जो बीज बिजोवै ।
भरि बैसाखौं टेसू धोवै ।।

अर्थात् चैत के महीने में अगर विजली चमके तो वैशाख में ऐसी वर्षा होगी कि टेसू के फूल तक धूल में मिल जाएँगे ।

चैती गीतों में कलापक्ष एवं भावपक्ष दोनों का प्रभाव है । इन गीतों की प्रतीक-योजना में भाषा-सौष्ठव है, सुन्दर शैली है और लाक्षणिकता है । इनमें जो अनायास भाव-सौन्दर्य एवं अनुभूति प्राप्त होती है, उसका कारण है, इनकी स्वाभाविक रचना-प्रणाली । चैती गीतों में कहीं-कहीं भाव-व्यंजना अत्यन्त अनुपम हो उठी है और उनमें व्यंग्य तथा लाक्षणिकता भी आ गई है—

आम मजरि महु तूअल ।
तइयो न पहु मोरा घूरल ।।

1. सुभाषितरत्नभाण्डागारम् ।
2. बिहारी सतसई, दोहा, 530.

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

इस चैतावर में व्यक्त लक्षणा देखते ही बनती है—

चइत मास जोवना फुलायल हो रामा
कि सैंया नहिं आएल ।

यहाँ 'जोवना' के साथ 'फुलायल' शब्द का प्रयोग अत्यन्त सटीक है ।

ध्वनि और व्यंजना की दृष्टि से एक चैती देखिए—

बैंगन तोड़े गैलो ओही बैंगन बरिया
गड़ि गेल छतिया में कांट हो रामा ।

इस गीत में काँटा गड़ जाने का तात्पर्य विरह-व्यथा की तीव्रता से संबंधित है ।

जायसी के पद्मावत में चैत्र-मास का वर्णन विरहिणी के मुख से इस प्रकार हुआ है—

चैत बसन्ता होइ धमारी । मोहि लेखें संसार उजारी ।।
पंचम बिरह पंच सरमारै । रकत रोइ सगरो बन ढारै ।।
बूड़ि उठे सब तरुवर पाता । भीज मंजीठ टेसू बनराता ।।

भाव है कि 'चैत्र मास में धमार हो रहा है । पर मेरे लिये तो संसार उजड़ गया है । पंचम राग के विरह-स्वर 'पिउ-पिउ' द्वारा कोयल पंच-बाण मार रही है । रक्त के आँसुओं से समूचा वन सींचा गया है । उस रक्त में डबकर वृक्षों के नये पत्ते ताम्रवर्ण के हो गये हैं । मंजीठ उसी से भींज गया है । वन का टेसू भी उसी से लाल हो गया है ।'

चैत के महीने में चम्पक, सहकार मुकुलित हो जाते हैं । वृक्ष कुसुमित हो उठते हैं । भ्रमर गुंजार करने लगते हैं । कामदेव मन को घायल करने लगता है । ऐसा चैत्र विरहिणी का मित्र नहीं हो सकता, क्योंकि चैत्र मास के सुखद उपादान वियोगिनी को विपरीत प्रभाव वाले प्रतीत होते हैं—

चैत्रि चंदन छाँटणां, गरल गुणां मुझ थाय
शशिहर शें पूजिउँ निशां, तु ते तपन तपाय ।।[1]

चैती गीतों की अलंकार-योजना भी अपने ढंग की है । समासोक्ति अलंकार

---

1. माधवानल : कामकन्दला अंग, 6/534.

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

का एक उदाहरण देखिए—

नइ भेजे पतिया
आयल चैत उतपतिया हो रामा ।

इस पद में चैत पर उपद्रव करने वाले प्राणी के व्यवहार का समारोप किया गया है। आचार्य विश्वनाथ ने साहित्य-दर्पण में समासोक्ति का लक्षण इस प्रकार किया है—

समासोक्तिः सर्षैर्यत्र कार्यलिङ्गविशेषणैः ।
व्यवहारसमारोपः प्रकृतेऽन्यस्य वस्तुनः ॥

चैत के लिये जिस तरह 'उत्पाती' शब्द का प्रयोग किया गया है, उसी तरह एक चैती गीत में नींद को 'वैरिन' कहा गया है—

रामा चइत के निंदिया
बड़ी बइरिनिया हो रामा ।
सुतलो बलमुआ नहिं जागे हो रामा ।

एक चैती गीत में प्रियतम कृष्ण के लिये 'मानिक' शब्द का प्रयोग किया गया है, जिसमें 'रूपक' अलंकार है—

आहो रामा मानिक हमरो हेरइले हो रामा, जमुना में ।
केहू नाहीं खोज़ेला हमरो पदारथ, जमुना में ।

चैती के अधिकतर पदों में शृंगार एवं करुण रस की व्यंजना है। शृंगार रस का एक उदाहरण प्रस्तुत है—

आहो रामा सूतल रहलीं पिया संगे सेजिया हो रामा
बाते-बाते ।
लागि गइले पियवा से रेरिया हो रामा
बाते-बाते ।

इसी प्रकार एक चैतावर में करुण रस की व्यंजना देखिए—

बहुत बयरिया हो रामा
कि धीमी-धीमी रे
पवन झकोरा मधुर-मधुर
कथिला बहि दुख दीउ

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

जाऊ बुझाऊ पाहुना
धनिक बिरह सुधि लीऊ
कि धीमी-धीमी रे ।

चैत के पदों में भावविदग्धता और करुण रस की व्यंजना करते हुए एक कवि ने लिखा है—

चैत फूले बन टेसुल ऊधो
भँवरा पइठि रस लेइ
का भँवरा तू लोटा पोटा
काहे दरद मोहि देइ ।

इसी प्रकार एक विरहिणी अपने प्रियतम को संदेश भेजती है—'चैत्र मास में वन में टेसू फूल गए हैं । तुम्हारी प्रतीक्षा करते-करते वियोग-जन्य दुःख से दुःखी होकर रुदन करते हुए मैंने अपने नेत्रों को गँवा दिया है ।'

इस तरह चैती गीतों में काव्य के सभी पक्ष उपलब्ध हैं । रस, अलंकार, लक्षणा-व्यंजना के अतिरिक्त इन गीतों में छोटे-छोटे कथा-चित्र भी मिलते हैं ।

चैती का वर्ण्य-विषय

चैती गीतों में प्रेम के विविध रूपों की व्यंजना हुई है । इनमें संयोग श्रृंगार की कहानी रागों में लिखी गई है । कहीं आलसी पति को सूर्योदय के बाद सोने से जगाने का वर्णन है, तो कहीं पति-पत्नी के प्रणय-कलह की झांकी देखने को मिलती है । कहीं ननद और भावज के पनघट पर पानी भरते समय किसी दुश्चरित्र पुरुष द्वारा छेड़खानी का उल्लेख है तो कहीं सिर पर मटका रखकर दही बेचनेवाली ग्वालिनों से कृष्ण के गोरस माँगने का वर्णन है । कहीं कृष्ण-राधा के प्रेम-प्रसंग हैं, तो कहीं राम-सीता का आदर्श दाम्पत्य-प्रेम है । कहीं दशरथनन्दन के जन्म का आनन्दोत्सव चित्रित हुआ है तो कहीं राम और उनके भाइयों के बीच का नैसर्गिक प्रेम प्रदर्शित हुआ है । कहीं स्वकीया तथा कहीं परकीया नायिका के प्रेम के विविध रूप दिखाये गये हैं । तात्पर्य यह, कि चैत गीतों में विविध कथानकों का समावेश पाया जाता है । इन गीतों में वसन्त की मस्ती एवं रंगीन भावनाओं का अनोखा सौन्दर्य है । इनके भावों से छलकती रसमयता निश्चय ही लोगों को मंत्रमुग्ध कर देती है ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

एक मुग्धा नायिका बाग में फूल चुनने की कल्पना में विभोर है। वह एक ही फूल के रंग में अपनी चुनरी और प्रिय की पगड़ी रंगाकर दोनों के बीच एकरूपता लाना चाहती है—

कुसुमी लोढ़न हम जाएब हो रामा
राजा केर बगिया
मोर चुनरिया सैंया तोर पगड़िया
एकहि रंग रंगाएब हो रामा।

यहाँ फूल कोमल भावों के प्रतीक हैं। इसी प्रकार प्रियतम के साथ अखण्ड प्रेम में डूबी एक स्त्री कोयल का स्वर सुनकर बहेलिया से प्रार्थना करती है कि मेरी सुख-निद्रा में विघ्न पहुंचानेवाली इस कोयल को मार डालो—

अहो रामा गोड़ तोर लागेली बावा के बहेलिया हो रामा
बिरही कोइलिया मारि ले आऊ हो रामा।

ननद के आचरण पर आशंका प्रकट करने वाली भाभी की उक्ति एक चैती गीत में देखें--

आहो रामा हम तोसे पूछेली ननदी सुलोचनी हो रामा
तोहरे पिठिया, धूरिया कइसे लाग हो रामा
तोहरे पिठिया।

आहो रामा बावा के दुअरवा नाचेला नेटुअवा हो रामा
भितिया सटल, धूरिया लागल हो रामा
भितिया सटल।

आलसी पति को जगाते-जगाते एक स्त्री जब हार जाती है तो वह ननद से उसे जगाने की प्रार्थना करती है। ननद के अस्वीकार करने पर वह कहती है कि तुम्हारे लिये तो भाई सो रहा है पर मेरे लिये उसका सो जाना सूरज, चाँद के अस्त होने जैसा है—

रामा तोरा लेखे ननदो भइया अलसइले हो रामा
मोरा लेखे चान सुरुज छपित भइले हो रामा।
मोरा लेखे।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

चैत मास की हवा शरीर को पुलकायमान करती हुई प्राणिमात्र को आलस्य से भर देती है। मीठी नींद तथा स्वप्न में डूबी हुई एक नायिका सखी के जगाने पर खीझ उठती है–

सुतला में काहेला जगौल हो रामा
भोरे ही भोरे।
रस के सपनमा में हुलइ अँखिया डूबल
अंग ही अंग अलसाये हो रामा
भोरे ही भोरे।

एक चैती गीत में पति-पत्नी के कलह का चित्रण किया गया है। पति के साथ बातों ही बातों में तकरार हो जाती है और पति रूठकर योगी हो जाता है। तब पत्नी व्यग्र होकर आने-जानेवाले बटोहियों से अपने प्रियतम का पता पूछती है।

एक गीत में संयोग श्रृंगार का अप्रत्यक्ष वर्णन है––

vide. 63.

एहि ठइयाँ झुलनी हेरानी हो रामा
एही ठइयाँ।
घरवा में खोजलीं, दुअरा पे खोजलीं
खोजि अइलीं सैंया के सेजरिया हो रामा।

उत्पाती चैत आ गया। प्रिय की पाती भी आई होती तो प्रिया को धीरज होता। चैत के मादक महीने में प्रियतम नहीं आए तो बाद में आना निरर्थक होगा। इस भाव को लेकर एक नायिका कहती है—

चैत बीति जयतइ हो रामा
तब पिया की करे अयतइ।

एक चैती गीत में एक मानिनी नायिका का मनोभाव व्यंजित हुआ है। उसके प्रियतम चैत में पियरी लेकर आये हैं। रूठी हुई नायिका कहती है कि मैं प्रियतम की लाई हुई साड़ी नहीं पहनूंगी, न उनकी सेज पर सोऊंगी। मैं अपने भाई के लड़के को खेलाऊंगी और फटे-पुराने कपड़े पहनूंगी।

एक चैती गीत में गहरी करुणा व्यंजित हुई है। इसमें राम को वन

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

भेजने के कारण सारी अयोध्या नगरी कैकेयी को उपालम्भ दे रही है—

राम जी के बनमा पैठोल ऽहो रामा
कठिन तोरा जियरा।
मरियो न गेलइ केकइया निरदइया
जारे मुख कठिन बचनमा हो रामा
कठिन तोरा जियरा।

बंगाल प्रदेश तंत्र-मंत्र के लिए प्रसिद्ध है। एक गीत के अनुसार एक स्त्री का आलसी पति गहरी नींद में सो रहा है। वह हारकर बंगालिन के यहाँ जाती है और कहती है कि किसी मंत्र से ही मेरे पति को जगाओ, मैं तुम्हें डलिया भर सोना दूंगी।

चैत के एक गीत में ऐसा उल्लेख है कि नदी के उस पार कोई योगी धूनी रमाए है और इस पार कोई स्त्री सूर्य को अर्घ्य दे रही है। दोनों की एक-दूसरे पर दृष्टि पड़ती है तो जन्म-जन्म की प्रीति उमड़ आती है। वस्तुतः वह योगी उस स्त्री का पति ही था—

रामा ओहि पार जोगिया धुनिया रमावे हो रामा
एह पार साँवरि सुरूज मनावे हो रामा,
एह पार।
रामा जोगिया के टूटेला जोगवा हो रामा
साँवरो के जूटेला जनम सनेहिया हो रामा,
साँवरो के।

इन गीतों में दैनिक जीवन के शाश्वत् क्रियाकलापों का चित्रण हुआ है। साथ ही इनमें चित्र-विचित्र कथा-प्रसंगों एवं भावों के अतिरिक्त सामाजिक जीवन की कुरीतियाँ भी चित्रित हुयी हैं। एक चैती गीत में बाल-विवाह के दुःखद परिणाम को चित्रित किया गया है—

रामा छोटका बलमुआ बड़ा नीक लागे हो रामा
अँचरा ओढ़ाई सुलाइबि भरि कोरवा हो रामा
अँचरा ओढ़ाई।
रामा करवा फेरत पछुअवा गड़ि गइले हो रामा

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

सुसुकि सुसुकि रोवे सिरहनवा हो रामा
सुसुकि सुसुकि ।

छोटी उम्र में विवाह और उधर पति का व्यापार के लिये विदेश जाने का चित्रण बहुत-से लोकगीतों तथा चैती गीतों में हुआ है । विवाह हुआ था, उस समय कन्या बहुत छोटी थी । अब वह युवती हो गई परन्तु परदेसी प्रियतम नहीं लौटा । उसके मन में तरह-तरह की बातें आती हैं । देवर अबोध है । वह अपने मन का दर्द आखिर किसे सुनाए ?

एक चैती गीत में एक कंजूस पति का चित्रण किया गया है––नायिका नील के रंग में चुनरी रंग रही है, ऐसे में उसे पसीना छूट गया । वह धीरे-धीरे पंखा झलने लगी तो बांह मुरक गई । वह अपने पति से प्रार्थना करती है कि मेरे लिये पटना से वैद्य बुला दो । साठ रुपये खर्च होने के डर से पति वैद्य को नहीं बुलाना चाहता और पत्नी को मुसीबत समझने लगता है ।

विवाह करके कन्या पराई हो जाती है । वह एक नये समाज में, नई दुनिया में प्रवेश करती है । नये-नये लोगों को उसे अपनाना होता है । पति का प्रेम पाकर भी वह भोले बचपन की वे बातें नहीं भूल पाती, जब वह सखियों के साथ झाकाझूमर खेला करती थी । पिता और भाई की स्मृति धुंधली पड़ सकती है, किन्तु जिन सखियों के साथ सपनों के घरौंदे बनाये हों, उन्हें भूलना कैसे सम्भव है ?

एक छोटी उम्र वाली कन्या पति के यहाँ जाने से घबरा रही है । कम उम्र होने के कारण वह गौना नहीं कराना चाहती । गौना होने पर पति की सेज पर नहीं सोना चाहती और सेज पर यदि सोना पड़े तो पति से नहीं बोलना चाहती, क्योंकि उसकी उमर बाली है !

एक पत्नी के मना करने पर भी पति बंगाल चला गया । सम्भवतः वह वहाँ किसी बंगालिन के जादू में फँस गया । बारह वर्ष बीत गए वह न लौटा, न कोई सन्देश भेजा । नायिका के साथ की सारी सखियाँ पुत्रवती हो गईं किन्तु नायिका की गोद सूनी है; और इधर आ गया चंचल चैत––

रामा पूरुब देसवा में बसे बंगलिनिया हो रामा
हरि लीन्हें तोर मन सुरति देखाइ हो रामा
रामा बारहो बरिस पर चिठियो न भेजे हो रामा
कइसे काटबि चइत दिन चंचल हो रामा ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

एक चैती पद में देवर-भाभी का परिहास है । देवर आगे बढ़ता है और आँचल पकड़ लेता है । भाभी उससे आँचल छोड़ने की प्रार्थना करती है, क्योंकि उसे सास-ननद का डर है ।

पारम्परिक चैती गीतों में श्रृंगार एवं देवता-सम्बन्धी पद मिलते हैं । कुछ नये गीतकारों ने भी चैती में इन्हीं रसों का आश्रय लिया है किन्तु उनका वर्ण्य-विषय कहीं-कहीं भिन्न है । एक कवि ने एक चैती गीत में नायिका के स्वप्न का वर्णन किया है : वह सपना देखती है कि उसके पति आये हैं । उनके लिये वह जलपान लाती है, बातचीत करती है, फिर पान खिलाती है । प्रियतम उसके लिये साड़ी और कंगन लाये हैं और उसे ज्यों ही गले लगाना चाहते हैं, उसकी नींद टूट जाती है ।

एक अन्य गीत में सौत के कष्ट से कुढ़ने वाली नायिका का चित्र मिलता है । प्रियतम की झूठी प्रीत से निराश हो वह जोगिन बन जाना चाहती है, प्राण दे देना चाहती है । एक गीत में ऐसा वर्णन है कि कोई कन्या अपने पिता से प्रार्थना करती है कि मुझे धान उपजाने वाले मुल्क में मत ब्याहना क्योंकि धान उबालते, सुखाते और गीला माड़-भात खाते-खाते मैं परेशान हो जाऊंगी ।

इस तरह इन चैती गीतों में लोकमानस का समग्र रूप चित्रित हुआ है । जीवन के हर्ष-विवाद, कारुण्य-श्रृंगार आदि से इन गीतों का सृजन हुआ है ।

चैत के गीतों में धार्मिक भावना

चैत का महीना बहुत-से धार्मिक पर्वों एवं धार्मिक भावनाओं से जुड़ा है । चैत्र शुक्ल नवमी को रामनवमी त्योहार का आयोजन बड़ी धूमधाम से होता है । इस दिन मर्यादा पुरुषोत्तम राम ने अयोध्या के राजा दशरथ के यहाँ अवतार लिया था । रामनवमी के दिन लोग उपवास या फलाहार करते हैं । इसके पूर्व चैत्र शुक्ल प्रतिपदा से नवमी तक मन्दिरों में रामायण का नवाह्न पाठ होता है । इस नवरात्रि में भगवती दुर्गा की भी स्तुति होती है । रामनवमी के दिन चैता गाने का एक विशेष उद्देश्य होता है, जो राम-जन्म एवं उनके जीवन की अन्य घटनाओं से सम्बद्ध रहता है । चैती धुनों में कुछ अन्य बोल लगाकर रामायण गाने की भी प्रथा इस अवसर पर देखी जाती है । चैत में

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

श्रीराम का जन्म होता है। घर-घर में बधावे वजते हैं। राजा दशरथ सोना लुटाते हैं। रानी कैकेयी सोने की अँगूठी दान में देती हैं। ऐसे में प्रजा के उल्लास का कहना ही क्या !

रामा चढ़ले चइतवा राम जनमले हो रामा
घरे घरे बाजेला अनध बधइया हो रामा,
रामा दसरथ लुटावे अनधन सोनवा हो रामा
कैकेयी लुटावे सोने के मुनरिया हो रामा।

कहीं-कहीं चैता गाने के पूर्व पहले उस स्थान के देवी-देवताओं का स्मरण भी किया जाता है, फिर पृथ्वी को स्मरण करके कहा जाता है, हे राम, आज हम इसी स्थान पर चैती गायेंगे—

रामा सुमिरीले ठुइयाँ, सुमिरि मति भुइयाँ हो रामा
एहि ठइयाँ, आजु चइति हम गाइबि हो रामा
एहि ठइयाँ।

एक अन्य विनय-सम्वन्धी चैता में आदि-भवानी पार्वती से कण्ठ में मधुर स्वर देने की प्रार्थना की गई है—

रामा पहिले मैं सुमिरों आदि भवानी हो रामा
कंठे सुरवा, होरवना सहइया हो रामा, कंठेसुखा।

एक चैता में धनुष-यज्ञ का वणन किया गया है : राजा जनक ने कठिन प्रण किया है कि जो शिव के धनुष को तोड़ेगा, उसी से वे अपनी वेटी जानकी का विवाह करेंगे—

रामा राजा जनक जी कठिन प्रन ठाने हो रामा
देसे देसे लिखि लिखि पतिया पठावे हो रामा।

इस प्रण में विष्णु-रूप श्रीराम की विज़य निश्चित है। एक चैता में आदिदेव भगवान् शंकर एवं आदि-भवानी पार्वती का सुन्दर संवाद चित्रित हुआ है : शिव जी उत्तर दिशा से भांग, धतूरा ले आए। सवेरे शिव जी गौरी को जगाकर भांग पीसने के लिये कहते हैं। पार्वती जी कहती हैं, 'हे महादेव, मैं कैसे उठं ? मेरी गोद में तो गणपति हैं।' शिवजी कहते हैं, 'गणपति को पलंग पर सुला दो।' तब पार्वती जी भांग तैयार करती हैं और शिवजी भांग खाकर उन्मत्त हो जाते हैं—

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

रामा सिव बाबा गइले उतरी बनिजिया हो रामा
लेइ अइले, भंगिया धतुरवा हो रामा, लेइ अइले।
रामा होत भिनुसरवा सिव जी जगावसु हो रामा
उठु गउरा, भंगिया रगरि ले आव हो रामा
उठ गउरा।

एक चैती गीत में शिवजी के ताण्डव-नृत्य का वर्णन किया गया है—

भोला बाबा हे डमरू बजावे रामा
कि भोला बाबा हे।
भूत पिचास संग सब खेले
ताण्डव नाच दिखावे हे रामा,
संग अर्धंग मातु पारवती
गले मुंडमाल लगावे रामा।

रामनवमी के ठीक चौथे दिन यानी चैत्र शुक्ल त्रयोदशी को जैन-धर्म के प्रवर्त्तक तथा चौबीसवें तीर्थंकर भगवान् महावीर का जन्म होता है—

जनमे त्रिशला के ललना, कुण्डलपुर के भवना
हो चान सुरुजवा उतर आये री ।
चैत महिनवाँ के पाख अँजोरिया
भरि गइले मैया के सून रे गोदिया
भइल धरती अकसवा में अइसन हुलसवा
कि बगियन फुलवा मँहक आये री ।।

अत: चैत्र मास जैन-सम्प्रदाय के लिये भी धार्मिक दृष्टि से एक महत्व-पूर्ण मास है। उड़ीसा में चैत के प्रत्येक सोमवार को जगन्नाथ जी की पूजा के साथ-साथ गीत भी गाये जाते हैं। मालवा में चैत्र के कृष्ण पक्ष से चैत्र शुक्ला तृतीया तक गौरी पूजा के उपलक्ष्य में गीत गाये जाते हैं।

अवध में चैत्र कृष्ण-अष्टमी के दिन शीतला माता का व्रत किया जाता है। देवी गीत में उपासिका के रूप में कहीं-कहीं मालिन का चित्र खींचा गया है।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

व्रज में चैत्र के महीने में नौदुर्गा देवी के गीत गाये जाते हैं। घट, कुल्हड़, सीरा, फुलका से पूजे जाते हैं। चार मिट्टी के ढेल लगाये जाते हैं। उतने ही महीने वर्षा होने का अनुमान किया जाता है। चैत्र में देवी के इस त्योहार का वड़ा महत्व है। शीतला देवी की पूजा भी इसी महीने में होती है। नौ दिन तक यह देवी पूजा होती है। नव-दुर्गा के इन नौ दिनों में प्रतिदिन देवी के गीत गाये जाते हैं। देवी का रात्रि-जागरण होता है। ऐसा देखा जाता है कि इन दिनों कभी-कभी सिर पर देवी आती हैं। ऐसा गीत गाने के क्रम में ही होता है। यह देवी-गीत दो प्रकार के होते हैं: (1) जो प्रतिदिन स्त्रियाँ गाती हैं, तथा (2) जिन्हें जागरण करने वाले भक्तगण गाते हैं।

चैत में देवी-गीतों के साथ 'लँगुरिया' अवश्य गाये जाते हैं। देवी के लाँगुर या लँगुरिया से जब जाति पूछी जाती है:

भैया लँगुरा रे अपनी जाति वताउ।

तो वह उत्तर देता है:

वम्मन के हम वालका उपजे तुलसी के पेड़।

इस तरह के देवी-गीतों के साथ देवी-सम्बन्धी अन्य गीत भी होते हैं। जैसे जालपा देवी, ज्वाला मैया, नगरकोट की माता, करौलीवाली माता, मैनपुरी की माता, जगदम्वा देवी आदि के गीत। नगरकोट की माता को वज्रेश्वरी के नाम से भी जाना जाता है। सम्भवतः इसी कारण माता के मंदिर में वज्र-किवाड़ों का उल्लेख हुआ है। इन गीतों में दो भक्तों कान्हर और धानू का दाम विशेष रूप से आता है। इन गीतों में ध्वजा, नारियल लौंगों का जोड़ा, माला अथवा केवड़े की माला चढ़ाने का वर्णन आया है।

देवी-पूजा के दिनों में वहुधा अष्टमी-नवमी को रात्रि-जागरण होता है, जिसे 'जागन्नु' कहते हैं। इस दिन देवी के भक्त, जो वहुधा कोइली, कुम्हार या पटवा होते हैं, रात को डमरू वजाते हैं। एक ज्योति जागृत रखते हैं और निरन्तर गीत गाते रहते हैं। भक्त के सिर पर इसी क्रम में कभी-कभी देवी आ जाती हैं।

व्रज की इस प्रथा की भाँति चैत्र में नवदुर्गा, नवाह्न या नवरात्रि विहार में भी प्रचलित है। चैत के महीने में विहार में एक 'छठ व्रत' भी मनाया जाता है, जिसे 'चैती छठ' कहते हैं। यह छठ कार्तिक माह की छठ की ही भाँति मनाई जाती है। चैत महीने के शुक्ल पक्ष की चतुर्थी से ही इस व्रत का

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

का आरम्भ हो जाता है; जिसे 'संयत' कहते हैं। इस दिन व्रती के यहाँ चने की दाल, कद्दू की सब्जी और बासमती चावल बनाकर लोगों को खिलाया जाता है। चैत्र शुक्ल पंचमी के दिन 'खरना' होता है जिसमें खीर-पूड़ी या दूध-भात खिलाने की प्रथा है। छठ का व्रत करनेवाली महिलाएँ या पुरुष सूर्यास्त से पूर्व गंगा या किसी नदी के किनारे सूर्य को अर्घ्य चढ़ाते हैं। यह अर्घ्य छठ के दूसरे दिन ठीक सूर्योदय के समय भी चढ़ाया जाता है। यानी डूबते सूरज और उगते सूरज को इस व्रत में प्रणाम करने की प्रथा है। इस अवसर पर तरह-तरह के छठ-गीत गाये जाते हैं—

प्रात के पहरा सुरूज भइल बहरा
उगीं ना अदितमल अरघ दियाउ, ए छठी माता।
करबि रउरे सेवा, करबि रउरे सेवा
रउरे सेवक मोरे निरमल काया
ए छठी माता।

प्रातःकालीन अर्घ्य देने के बाद ही दो दिन का उपवास करनेवाले व्रती का पारण होता है। बड़ी संख्या में व्रत करनेवालों के सगे-संबंधी छठी मैया के गीत गाते हुए नदी-किनारे तक जाते हैं।

बिहार में चैती-नवरात्रि के समय चैत्र मास के शुक्ल पक्ष की नवमी को शीतला माता की पूजा होती है और गीत गाये जाते हैं। शीतला माता प्रसन्न होकर आशीर्वाद देती हैं—

नीमिया की डाढ़ि मैया लावेली हिलोरवा
कि झूलि झूलि ना मइया गावेली गीत।

चैती-शैली के गीतों में भगवान् श्रीकृष्ण की लीलाओं से सम्बन्धित पद भी पाये जाते हैं। कहीं वे गोकुल में दही बेचनेवाली ग्वालिन से छेड़खानी करते हुए पाये जाते हैं—

रामा छोटी मुकि ग्वालिनि अँगिया की पातरि हो रामा
चलि भइली गोकुला नगरिया दहिया बेचन हो रामा
चलि भइली।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

रामा गोकुला मथुरवा के साँकरि गलिया हो रामा
ताहि वीचे, कान्हा धरे मोरे अँचरा हो रामा
ताहि बीचे ।।

तो कहीं वे गोपियों को छेड़ने के लिये यमुना में छिप जाते हैं। श्रीकृष्ण के रूप में हृदय रूपी रत्न के खो जाने के कारण गोपियाँ अत्यन्त चिन्तित हो उठती हैं।

हिन्दी का सन्त-साहित्य लोकगीतों से वहुत प्रभावित रहा है। कवीर, धर्मदास, दरिया साहव, यारी साहब आदि के भक्ति-गीतों में लोकगीतों की झलक स्पष्ट है। दरिया साहव का एक निर्गुण पद तो 'घांटो' नाम से ही उपलब्ध है—

कुबुधि कलवारिनि बसेले नगरिया हो रे
उन्हक मोरे मनुआँ मतावल हो रे ।
भूलि गैले पिया पंथवा द्रस्टिया हो रे
अवघट परलीं भुलाए हो रे ।
भवजल नदिया भेआवन हो रे ।
कवने के बिधि उतरब पार हो रे।
दरिया साहब गुन गावल हो रे
सतगुर सब्द सजीवन पावल रे ।।

अर्थात् इस शरीर-रूपी नगर में दुष्टबुद्धि माया वसी हुई है। उसने वासना की शराब पिलाकर मेरे मन को मतवाला बना दिया है । इस कारण वह पिया के घर का रास्ता भूल गया है और दृष्टि भी धुंधली हो गई है। मन विषयों के बीहड़ रास्ते में भटक गया है। संसार-रूपी भयावनी नदी को यह जीवात्मा कैसे पार करेगी ? दरिया साहब गुरु का गुणगान करते हैं कि सतगुरु से प्राप्त उपदेश-रूपी संजीवनी उन्हें प्राप्त हो गई है, इसलिए अब वह निश्चिन्त हैं।

एक भोजपुरी चैता में बाद के रचनाकार श्री केवल ने शिवजी के रूप का वर्णन किया है—

भोला त्रिपुरारी भइले मतवलवा हो रामा
अरे जेही के सीस पर गंग विराजे

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

सोहेला चन्द्रभालवा हो रामा
कि सेइ भोला हो पहिरे मुण्डमलवा· हो रामा
आरे जोगी बीन बजावे गावे आरे भूतवा हो रामा
कि केवल डरपि गये भोला सरनवा हो रामा ।

चैती गीतों की सामयिकता वर्ष के पहले महीने में है । हिन्दी का यह प्रथम मास धार्मिक भावनाओं का महीना है । सम्भवतः यह आगे के ग्यारह महीनों में लगातार आस्था जगाए रखने की नींव हो । चैती गीतों में धार्मिक भावना के मूल में चैत महीने के अनुष्ठानों का सहज प्रभाव देखा जा सकता है ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

4

चैती का उद्‌भव और विकास

'चैती' शब्द संस्कृत शब्द 'चैत्री' का अपभ्रंश-रूप है। 'चैत्री' का अर्थ है–चैत्र-पूर्णिमा। हिन्दू-धर्म में पूर्णिमा अथवा पूर्णमासी का बड़ा महत्व है। धार्मिक दृष्टि से पूजा-सम्बन्धी विशेष अनुष्ठान के लिये पूर्णिमा के दिन को विशेष मान्यता प्राप्त है। श्रावणी पूर्णिमा के दिन रक्षाबन्धन का पवित्र पर्व मनाया जाता है। भादों की पूर्णमासी के दिन जैन-सम्प्रदाय के लोगों का एक बहुत बड़ा धार्मिक त्योहार दशलक्षण पर्व संपन्न होता है। शरत्पूर्णिमा अपनी अद्वितीय सुषमा के लिये काव्य-साहित्य में बहुचर्चित है। कार्तिक पूर्णिमा के दिन गंगा-स्नान करने से पाप-मुक्ति होती है, ऐसी धारणा प्रायः पाई जाती है। फाल्गुन पूर्णमासी के दिन होली की समाप्ति एवं चैत का आगमन होता है। चैत्र पूर्णिमा के दिन इसी प्रकार चैत की विदाई होती है।

यहाँ हमें चैती-गायन के उद्‌भव पर विचार करना है। चैती के उद्‌भव का प्रश्न कुछ जटिल है। लोकसंगीत के उद्‌भव की बात हम पहले अध्याय में कर आये हैं। लोकसंगीत मानव की आदिम एवं अपरिष्कृत अवस्था का संगीत है। स्पष्ट है कि लोकसंगीत का बीज सृष्टि के आदिकाल में ही पड़ चुका था। जाति-विशेष में लोकसंगीत की अपनी-अपनी शैली, अपनी-अपनी

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

बोली निर्धारित हुई। चैती लोकसंगीत का एक प्रकार-मात्र है, अतः इसका उद्भव भी लोकसंगीत के उद्भव के साथ ही माना जा सकता है। हां, एक अन्तर यहाँ अवश्य हो सकता है। लोकसंगीत उस युग की वस्तु है जब मानव जाति जंगली जाति के रूप में थी। उस समय का लोकसंगीत शब्द की दृष्टि से सार्थक भले न रहा हो, किन्तु उसका अस्तित्व था। कालान्तर में लोकसंगीत का परिष्कार तथा वर्गीकरण हुआ। संस्कारों की दृष्टि से, रस, व्रत एवं ऋतुओं के क्रम से, जाति के आधार पर, श्रम-गीत अथवा कुछ विविध गीत लोकसंगीत के अन्तर्गत आये। यह निश्चित है कि ये गीत मानव के दैनिक-जीवन के इतिहास हैं। जन्म से लेकर मृत्यु तक की गाथा इन गीतों में वर्णित है। यही नहीं, मानव-मन की सूक्ष्म से सूक्ष्म भावनाओं की अभिव्यक्ति इन गीतों में हुई है। चैती गीत ऋतु-गीतों के अन्तर्गत आते हैं जिन्हें मौसमी-गीत भी कहा जा सकता है।

वसन्त आता है तो मन-प्राण पर छा जाते हैं, वसन्त के रसीले गीत। इसे ऋतु-परिवर्तन भी कहा जा सकता है। इसी समय फसल काटी जाती है। चैत का महीना भी ग्रामीणों के उत्सव का महीना है। वसन्त पंचमी के दिन से रंग अबीर-भरे गीत गूंजते हैं। चौपाल धमार से गूंज उठता है। फाल्गुन पूर्णिमा की रात को होली का अन्त होता है और उभर आते हैं—चैती के स्वर!

फाग और चैती रथ के दो पहियों की भाँति, दूसरे शब्दों में, पुरुष और नारी की भाँति आपस में जुड़े हुए हैं। फागुन और चैत के क्रमशः पुरुष और नारी का प्रतीक होने से सम्बद्ध कहावत भी गाँव में खूब प्रचलित है। यों भी, होली में पुरुष और स्त्री की आपस की हँसी-ठिठोली सामान्य रूप से वर्णित है किन्तु चैती पूर्णरूपेण नारी का प्रतीक प्रतीत होती है। जितने भी चैती गीत परम्परागत रूप से उपलब्ध होते हैं, उनमें नारी की ओर से ही निवेदन पाया जाता है। इस प्रकार के एक-दो उदाहरण देखिए—

चैत मास चुनरी रंगा दे हो सैंया
लाली रे लाली।

चुनरी रंगा दे; अंगिया सिया दे
बिच बिच घुंघरू लगा दे हो सैंया
लाली रे लाली।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

एक अन्य गीत में व्यक्त मानिनी का भाव देखिए—

आइल चैत महिनवाँ हो रामा
पियरी ना पेन्हव ।

इस प्रकार के कुछेक अपवादों को छोड़कर अधिकतर चैती गीतों में स्त्री की ओर से ही निवेदन होता है । इसी कारण चैती गीतों में लालित्य भी अधिक मिलता है । शीत के चार महीनों में चैत का महीना अन्तिम माना जाता है और इस माह का जाड़ा इतना प्रसिद्ध है कि इसके सम्बन्ध में एक कहावत प्रचलित है—'एक ब्राह्मण देव को बछिया बेचकर कम्बल खरीदना पड़ा ।' जिस प्रकार दिया बुझने के पहले लौ एक बार जोरों से जलती है, उसी प्रकार जाड़े की विदाई के पूर्व एक बार शीत का रंग और गहरा हो जाता है । इस मौसम में, जिसे 'मधुमास' भी कहते हैं, प्राणिमात्र विशेष रूप से शृंगार-प्रिय हो उठता है । मधुमास मात्र प्रकृति में ही नही आता, जनमानस पर भी छा जाता है और ऐसे में नारी की ओर से प्रणय की बातें निश्चय ही पुरुष हृदय को पुलकित करने लगती हैं ।

चैत के गीतों में जो अलमस्ती है, वह पुरुष-स्वर में ही उभर कर आती है । निवेदन नारी का होता है, परन्तु मुखर होता है वह पुरुप-स्वर में । होली गीतों में प्रयुक्त होने वाला 'हो रामा' पद चैती गीतों की एक विशेष पहचान है । अतः निश्चय ही गायन-शैली, शृंगार-भाव और वसन्तकालीन होने के कारण होली और चैती परस्पर जुड़ी हुई हैं । वसन्त के पूर्व जबतक कृषक खेत में पसीना बहाते हुए जलती धूप में मेहनत के फूल उगाने के अथक प्रयास में होते हैं, तबतक उनके पास यह मानसिकता नहीं होती कि वे पेड़ों की छाँव में बैठकर मस्ती के गीत गायें, क्योंकि सुखद परिणाम की अनवरत् प्रतीक्षा उन्हें होती है और जब तक वह प्रतीक्षा विश्वास में नहीं बदल जाती, हृदय का उल्लास कण्ठ में आता भी नहीं । अतः खेतों में फसल तैयार होने के बाद जब अनाज कटकर घर में आ जाता है, घर-द्वार जब धन-धान्य से परिपूर्ण हो जाता है, तब कण्ठ में उतरते हैं, मस्ती के स्वर, उल्लास के गीत ! इधर कोठरियाँ अनाज से भरती हैं, उधर प्रकृति सोलह शृंगार करके खड़ी हो जाती है—टेसू के फूलों की चुनरी और हरी दूबों की झीनी चादर ओढ़-कर वसन्त की अगवानी करने के लिये ! घट-घट में उमड़ आती है, वासन्ती शीतलता । और तब स्वाभाविक है, उत्सव की अभिलाषा । जिसके जागते ही गाँव के सरल गृहस्थ आश्वस्त होकर चौपाल में, दालान में, छतों पर गाने

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

लगते है क्रमश: फाग और चैती ! फागुन के महीने में होली और होली के समाप्त होते ही चैत के चढ़ने पर चैती गाना शुरू कर देते हैं। चैत के पूरे महीने भर गाँव-गाँव में चैती के स्वर गूंजने लगते हैं। चैत के महीने में चित्त की चंचलता चैती गीतों में भी चित्रित हुई है––

चढ़ल चइतवा चित मोरा चंचल हो राम
कवने करनवां पियवा रूसि भगलइ हो राम
कवने करनवां।

चैती गीतों के उद्‌भव का कोई निश्चित इतिहास नहीं है। चैती गीत भी लोक-गीतकार की सहज, स्वाभाविक आशु-रचना है जो अनायास ही एक कंठ से दूसरे कंठ में आकर लोक में प्रचलित हो गई है। चैती की गाथा कृषि-प्रधान देश में निश्चित रूप से खेत-खलिहानों से संबंधित है। फसल तैयार होने के वाद जव अनाज घर में आ जाता है, उसी समय लोग आश्वस्त होकर उमंग में आते हैं और यहीं से होता है—चैती का उद्‌भव।

अव प्रश्न उठता है, चैती के विकास का। चैती के विकास में हमें इसके साहित्य एवं सांगीतिक, दूसरे शव्दों में, भावपक्ष एवं कलापक्ष दोनों को देखना होगा। चैती के सांगीतिक पक्ष में उसकी धुनों पर आद्योपान्त दृष्टि डालने पर इस निष्कर्ष पर आना पड़ता है कि इसकी धुन की मौलिकता अपने-आप में अक्षुण्ण एवं स्थायी है। यह दूसरी बात है कि जैसे-जैसे गायन-शैली में परिष्कार होता जाता है, वैसे-वैसे प्रस्तुति की शैली भी परिवर्तित होती जाती है। यह सत्य है कि शास्त्रीय संगीत लोकसंगीत से उद्‌भूत है। लोकसंगीत परिष्कृत होकर सीमाबद्ध हुआ और शास्त्रीय संगीत की परिधि में आया। लोकनृत्यों का परिष्कार हुआ तो शास्त्रीय नृत्यों का जन्म हुआ। उसी प्रकार मौलिक रूप में जो लोकगीत हैं, उन्हें जव अलंकारों से सँवार दिया जाता है तो वे शास्त्रीय कोटि में आ जाते हैं। गाँव-गाँव में चैती की जो धुनें प्रचलित हैं उन धुनों का विकास अवतक नहीं हुआ है, यही कहना अधिक युक्तिसंगत लगता है क्योंकि विकास के अन्तर्गत उन धुनों में जो परिवंतन अपेक्षित था, वह नहीं हो सका है; अर्थात् उनकी मौलिकता अभी भी ज्यों की त्यों वनी हुई है। यह दूसरी वात है कि इसका प्रसार और क्षेत्र वढ़ रहा है। एक कण्ठ से प्रसारित होकर यह कोटि-कोटि कण्ठों में समाहित हो गई है। इसे लोक-कण्ठ से लेकर शास्त्रीय कण्ठ ने भी अपनाया। शास्त्रीय संगीतकारों ने

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

चैती गीतों को ध्रुपद-धमार शैली में तथा ठुमरी के रूप में भी प्रस्तुत किया है। लेकिन इसके विशिष्ट रूप को स्थिर ढंग से नहीं बदला गया है। धुनें वही हैं और मौलिकता सुरक्षित है, मात्र शैली में थोड़ा अन्तर आया है।

चैती के कलापक्ष अथवा सांगीतिक विकास की ओर विहंगम दृष्टि डालने के पश्चात् हम इसके भावपक्ष एवं साहित्यिक विकास पर विचार करेंगे। चैती के जो गीत मौखिक परम्परा में प्रचलित हैं, उनमें शृंगार रस का पुट अधिक है तथा नारी-भावना का प्राधान्य है। कालान्तर में इन गीतों में धार्मिक भावना तथा अन्य विषयों का प्रवेश भी हुआ। जैसे—चैत में राम-जन्म से सम्बन्धित, शिव-पार्वती के संवाद, कृष्ण की लीला आदि विषयों ने भी इन गीतों में स्थान पाया। धीरे-धीरे जब चैती का प्रसार काफी होने लगा तो गीतों में भी परिवर्तन हुआ। चैती दूर-दूर के क्षेत्रों की वस्तु नहीं है, मात्र दक्षिण बिहार और पूर्वी उत्तर प्रदेश में ही यह प्रचलित है। दरभंगा क्षेत्र के शास्त्रीय गायकों ने घूमते-फिरते चैती-गीत सुने तो उन्होंने इन्हें अपनाया और तभी उनके यहां इसका प्रचार हुआ। वस्तुतः यह मिथिला की स्वानुभूत वस्तु नहीं है। धुनों की यात्रा के साथ यह मिथिला पहुंची और वहाँ चैती गीत प्रचलित हुए। भोजपुरी एवं मगही के चैती गीतों का भाव लेकर कुछ विषय-परिवर्तन के साथ उनके यहाँ मैथिली भाषा के गीत प्रचार में आए। निश्चय ही ये रचनाएँ नई होंगी। ऐसे गीतों का एक उदाहरण देखिये—

अंगुरी में बिन्हलक नगिनिया हो रामा
ससुरा के कहबै भैंसुर पतियायत
स्वामी मोर बिखिया उतारि देत हो रामा।

इस चैती गीत का भाव निश्चय ही भोजपुरी के इस झूमर से लिया गया है—

अंगुरी में डँसले बिया नगिनिया
हे ननदिया मोरी रे दियरा जरा दऽ।
दियरा जरा दऽ आपन भैया के बोल दऽ
नस – नस में फैलल जात रे जहरिया।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

मैथिली का एक और चैती गीत इस प्रकार है—

चैतक गर्मी वेसरमी हो रामा
इहो हम जनितौं पिया दुवरैता
पियाजी लै पूड़ी छकावितौं हो रामा ।

चैती गीतों में रचयिताओं का नाम प्रायः नहीं मिलता किन्तु बुलाकी-दास के 'चैती घाँटो-पद' बहुर्चचित हैं। उनका नाम बुल्ला साहब भी है। इनका काल सम्वत् 1780 के लगभग माना जाता है। ये गाजीपुर जिले के थे। इनकी रचनाओं में कुन्दकुंवरि का नाम आता है, जो सम्भवतः उनकी पत्नी रही हों—

दास बुलाकी चइत घाँटो गावे हो रामा
गाइ-गाइ, कुन्दकुँवरि समुझावे हो रामा, गाइ-गाइ ।

किन्तु कालान्तर में और भी चैती गीतों की रचना हुई। सन्त-साहित्य में भी चैती गीतों की शैली अपनाई गई। सन् 1731 के दरिया साहब की एक घाटो रचना उपलब्ध है जिसका विषय आत्मा, परमात्मा और सांसारिक माया से सम्बद्ध है।

सन् 1846 में पटना में एक उर्दू कवि सैयद अली मुहम्मद 'शाद' हुए जिन्होंने फिकरे-वलीग नामक पुस्तक लिखी। इस पुस्तक में एक चैती गीत भी है—

काहे अइसन हरजाई हो रामा
तोरे जुलुमी नयना तरसाई हो रामा
सास ननद मोका ताना देत हई
छोटा देवरा हँसि के वोलाई हो रामा ।

बुलाकीदास के एक शिष्य रामदास हुए हैं जिनका ठीक समय ज्ञात नहीं है। अनुमान है कि इनका स्थान बलिया या गाजीपुर के पास रसड़ा कस्वा के अन्तर्गत झुरकुंडा गाँव में है। आज भी उनका मठ वहाँ विद्यमान है। इनके राम-जन्म एवं कृष्ण-सम्बन्धी चैती गीत मिलते हैं।

सन् 1840 के सन्त-कवि केसोदास ने चैती शैली में निर्गुण-भक्तिपरक गीत की रचना की है—

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

भावे नाहीं मोहि भवनवाँ हो रामा
विदेस गवनवाँ ।
जो एह मास निरास मिलन भैले
सुन्दर प्रान गवनवाँ हो रामा ।
केसोदास गावे निरगुनवाँ
ठाढ़ी गोरी करे गुनवनवाँ हो रामा ।

19वीं सदी के अन्त में सारन जिले के विजईपुर गाँव में कवि **सुरुजमल** के चैती गीतों में परम्परा से कुछ हटकर चैती का वर्ण्य-विषय पाया जाता है; यद्यपि भाव वही हैं—

सपना देखीला बलखनवाँ हो रामा
कि सइयाँ के अवनवाँ ।
'सुरुज' चाहेंले गरवा लगावल
कि खुलि गइले पलक पपनवाँ हो रामा ।

बनारस निवासी कवि **देवीदास** ने अपनी 'बाँका छवीला गवैया' नामक पुस्तिका में एक चैती पद दिया है—

नाजुक बलमा रे रतिया नहिं आवे हो रामा
एक त मोरी चढ़ली जवानी
दूजे बिरहा सतावे हो रामा
चैतवा की गरमी निंदिया न आवे हो रामा ।

श्रीकेवल नामक एक कवि के चैती पद में शिव के स्वरूप का वर्णन है । बीसवीं सदी के पूर्वार्द्ध में शाहाबाद जिले में **राजकुमारी सखी** नामक एक कवियित्री हुईं जिन्होंने अपने चैती गीत में परम्परागत वर्ण्य-विषय को बिल्कुल ही छोड़ दिया है—

गोड़ तोही लागले बावा हो बढ़इता से आहो रामा
धनवाँ मुलुक जनि ब्याह हो रामा ।
सासु मोरा मरिहें गोतिनि गरिअइहें हो रामा
लहुरि ननदिया ताना मरिहें आहो रामा ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

मैथिली चैतावर में भी दुखमोचन एवं गोपीनाथ के नाम कहीं-कहीं देखे जाते हैं--

दुखमोचन नन्दलाल मिलन करि
जुग सँ जामिनि जाथि हो रामा।
× × ×
कहत मे गोपीनाथ रहव ने काहू साथ
हरि हरि करु ने जपनमा हो रामा।

भोजपुरी, मगही, मैथिली आदि बोलियों में आगे ऋतु-सम्बन्धी और भी रचनाएँ प्रकाश में आ रही हैं, जो परम्परागत लोकगीत न होते हुए भी उनसे जुड़ी हुई हैं। रचनाएँ नई हैं, किन्तु उनके भाव पुरानी रचनाओं के बहुत समीप हैं। भोजपुरी गीतों में चैत सम्बन्धी एक आधुनिक रचना इस प्रकार है--

चैत के रतिया अकसवा में चढ़ले
धीमे-धीमे चाँदी के चन्दा हो रामा
गछिया के डारी से बीचे-बीचे झाँके
धीमे-धीमे गोर की चन्दनिया हो रामा।

भोजपुरी, मगही, मैथिली के अतिरिक्त चैती गीतों में बोली का भी विकास हुआ। चैती की ललित शैली अनेक बोलियों में अपनाई जाने लगी। विहार के प्राचीन अंग-प्रदेश, सम्प्रति भागलपुर क्षेत्र, की अंगिका बोली में एक चैती देखिये--

एङ ना फुलैलै फुलगेनबा हो रामा
पिया नहिं ऐलै
मँजरल बगिया में कोयलिया बोलै
चुबी चुवी महुआ मधुर रस घोलै
मधुवन में कुसुम फुलैलै हो रामा
भँवरा लोभैलै।[1]

प्राचीन वैशाली, सम्प्रति मुजफ्फरपुर, क्षेत्र की वज्जिका बोली में डॉ० अजित नारायण सिंह 'तोमर' का एक चैती गीत इस प्रकार है--

1. पछिया बयार (अंगिका गीत-संग्रह) : परमानन्द पाण्डे।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

चइत माह परम सोहाओन हो रामा
चइत माहे ।
महुआ फुलाएल, आम महुआएल
धरती जे लगइ लोभाओन हो रामा
चइत माहे ।

भारतेन्दु-प्रभृति कवियों ने भी कुछ चैती गीत लिखकर इनकी साहित्यिक गरिमा को बढ़ाया । तत्कालीन कवियों **पं० अम्बिकादत्त व्यास** और **किशोरी लाल गोस्वामी** के भी कुछ सुन्दर पद मिलते हैं ।

साहित्य की परम्परा अविराम गति से अपनी यात्रा तय कर रही है । निश्चय ही और भी कड़ियाँ आगे जुड़ेंगी । किन्तु यह निश्चयपूर्वक कहा जा सकता है कि जनजीवन से जुड़ रही लोक-संस्कृति को लोगों ने बड़ी आत्मीयता से अपनाया है । जो लिया है, उसके प्रतिदान की अभिलाषा सहज-स्वाभाविक है । इसलिये लोक-साहित्य का भण्डार बढ़ाते रहने की प्रवृत्ति उनमें जाग रही है । इस तरह चैती का भावपक्ष, या साहित्यिक पक्ष, विकास के पथ पर निरन्तर अग्रसर है ।

चैती का सांगीतिक दृष्टिकोण

संगीत की दृष्टि से चैती अत्यन्त मधुर एवं कर्णप्रिय गायन-शैली है । जहाँ तक लोक-संगीत की परिधि में चैती का पर्यवेक्षण है, वह अपने-आप में ठोस एवं सम्पूर्ण है । अधिकतर चैती गीतों को सुनने के बाद इस निष्कर्ष पर आना पड़ता है कि चैती विशेष रूप से सात एवं आठ मात्रा में गाई जाती है । सात मात्रा में अधिकतर रूपक या कहीं-कहीं चौदह मात्रा वाले 'जत' ताल का प्रयोग किया जाता है । आठ मात्रा में गाई जाने वाली चैती का गाँवों के अनुसार जो प्राचीन विभाजन है, वह पाँच मात्रा एवं तीन मात्रा का है, जबकि आधुनिक विभाजन के अनुसार आठ मात्रा का विभाजन चार-चार मात्रा करके, यानी 'कहरवा' ताल के अनुसार ही होता है। दादरा तथा अन्य तालों में चैती नहीं पाई जाती––कम-से-कम अब तक की खोज में तो ऐसा ही पाया गया है ।

जहाँ तक इसमें प्रयुक्त होने वाले स्वर-समूह की बात है, चैती किसी थाट-विशेष की उपज नहीं है । हाँ, इसके स्वर-समुदाय को देखते हुए इन्हें थाट-विशेष में रखा जा सकता है । विशुद्ध चैती, मात्र लोकधुन है, किन्तु

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

स्वर-संयोजन को देखते हुए लगता है कि चैती गीत अधिकतर खमाज थाट में रखे जा सकते हैं। कभी-कभी चैती विलावल थाट में भी पाई जाती है। कुछ शास्त्रीय गायकों ने इसे 'पीलू', तो कुछ ने इसे 'देस' एवं 'तिलककामोद' में ही बाँधा हैं। चैती गीत राग गारा एवं जै-जैवन्ती में भी गाये जा सकते हैं। इन रागों में बँधकर भी चैती सहज संग्राह्य होती है। लोकधुनों को अपनाने के सम्बन्ध में शास्त्रीय संगीतकारों का अपना दृष्टिकोण रहा है। हम यहाँ कुछ ऐसे संगीतज्ञों का नामोल्लेख कर रहे हैं जिन्होंने चैती की मौलिकता को बनाये रखकर उसे ठुमरी की सरस शैली में प्रस्तुत किया--

श्री रामप्रसाद मिश्र उर्फ 'रामू जी' : ये मूलतः बनारस के रहनेवाले हैं और बड़े रामदास जी के शिष्य हैं। ये शास्त्रीय संगीत में तो निष्णात् हैं ही, ठुमरी में भी इनकी अनोखी पैठ है। आजकल ये गया में हैं। इनकी गायी हुयी एक चैती बहुत प्रचलित हुयी--

एहि ठइयाँ झुलनी हेरानी हो रामा।
एही रे ठैंया।

स्व० बाबू श्यामनारायण सिंह : ये पटना के रहनेवाले थे। मूलतः ये प्रसिद्ध हारमोनियम-वादक थे, साथ ही गाते भी थे। इनकी गायी हुयी कुछ चैतियाँ तो सुननेवालों को मंत्रमुग्ध कर देती थीं, जैसे--

आइल चैत महिनवाँ हो रामा
पियरी ना पेन्हव।

इस चैती को इन्होंने पीलू की ठुमरी-शैली में बाँधा था। गीत में एक मानिनी नायिका का भाव दर्शाया गया है। उनकी गायी हुयी एक चैती में श्रृंगार-भाव का सुन्दर चित्रण देखते ही बनता है--

सेज चढ़त डर लागे हो रामा
पायल मोरी बाजे।

पं० रामचतुर मलिक : आप दरभंगा निवासी हैं और आमता-घराने से सम्बद्ध हैं। आप संगीत के प्रकाण्ड विद्वान् और ध्रुपद-धमार गायन में राष्ट्रीय ख्याति-प्राप्त गायक हैं। कभी-कभी आपके स्वर में ध्रुपद-धमार शैली में गाई गई चैतियाँ भी सुनी गई हैं।

वनारसी चैती गानेवाले कलाकारों में **पं० महादेव मिश्र, पं० हरिशंकर मिश्र एवं श्रीमती गिरिजा देवी** को भुलाया नहीं जा सकता। कुछ चैतियाँ

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

जानकीबाई इलाहाबादी, राधाबाई और **सिद्धेश्वरी देवी** आदि के स्वरों में भी उपलब्ध हैं।

लोकगीत-गायकों में ऐसे अनेक कलाकार हैं, जिनके पास चैती की विभिन्न धुनें हैं, उनकी विभिन्न शैलियाँ हैं। ऐसे लोग भी हैं, जिनके पास लोक-गीतों का अक्षय भण्डार है, किन्तु परिचय-सूत्र न होने के कारण हम उन निधियों से वंचित हैं। बहुचर्चित एवं परिचित व्यक्तित्व में पटना की **श्रीमती विन्ध्यवासिनी देवी** का नाम अग्रगण्य है, जिनके पास विभिन्न प्रकार के लोक-गीतों के अतिरिक्त चैती गीतों का भी अनुपम संग्रह है। यह संग्रह धुनों का भी है और गीतों का भी।

चैती की सांगीतिकता उसके ललित साहित्य से भी जुड़ी हुई है। चैती के शब्द-शब्द में रस है, और उसी रस से सींचे जाते हैं सरस स्वर। सीधीसादी भाषा में कही गई चैतियाँ भी अत्यन्त मार्मिक एवं प्रभाविष्णु होती हैं। देखने में शृंगारिक होते हुए भी उनके किसी कोने में वेदना अवश्य छिपी होती है, जो संगीत की आत्मा है। लोक-धुनों के रूप में चैती का सांगीतिक पक्ष अपना अलग अस्तित्व रखता है। शास्त्रीय गायकों ने ठुमरीनुमा मिजाज से चैती की प्रस्तुति करके उनमें शास्त्रीयता का पुट भर दिया है। यह कहना कठिन है कि दोनों में किसका प्रभाव अधिक है। इतना अवश्य है कि चैती में मधुर स्वरों का संयोजन होने के कारण उसमें हल्के रागों का प्रयोग किया गया है—विशेष रूप से उन रागों का, जिनमें ठुमरी अधिक मधुर प्रतीत होती है।

चैती यात्रा : गांव से शहर की ओर

गाँव और शहर अलग होते हुए भी अलग नहीं हैं। दोनों के बीच सांस्कृतिक आदान-प्रदान उनके पारस्परिक सम्बन्धों के बीच सेतु का काम करता रहा है। शहर की ऊँची-ऊँची अट्टालिकाएं हों, रोशनी की जगमगाहट हो, अलंकारों की भरमार हो, नये-नये फूलों से लदे बगीचों का साम्राज्य हो, किन्तु यह तय है कि कहीं-न-कहीं से हमारी दृष्टि गाँव की झोपड़ियों पर जा अटकती है। रोशनी की जगमगाहटसे दूर गाँवके खुले आसमानके तले हम चाँद-तारोंकी ठंढी रोशनी महसूस करने के लिए भी कभी-कभी ललक उठते हैं। सोने-चाँदी के आभूषणों का बोझ उतारकर कभी गाँवों की नैसर्गिक सुषमा में स्वयं को रंग लेने को, ताजे फूलों से स्वयं को सँवार लेने को जी चाहने लगता है। मात्र सौन्दर्यवर्धन के लिये सजे बगीचों को छोड़कर गाँव के उन खेत-खलिहानों में कुछ देर विचरने का मन करता है, जिनपर न केवल किसान की आशा, वरन् हमारा भविष्य भी टिका

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

हुआ है। हम आधुनिकता में अपने को कितना भी ढाल लें, गाँवों की संस्कृति से अपने को किसी प्रकार अलग नहीं कर सकते।

उपवन में रंग-बिरंगे फूलों की भाँति गाँवों में रंग-बिरंगे लोकगीत हैं। जन्म के, छठी के, मुण्डन के, यज्ञोपवीत के, झूले के, ऋतुओं के, विवाह के, गौने के, व्रत के, मृत्यु के, श्रम के, खेल के, लोरी के इत्यादि अनेक प्रकार के विविध गीतों से लोक-साहित्य का भण्डार परिपूर्ण है। नगरों में भी इन गीतों का प्रचार है। यह और बात है कि एक कण्ठ से दूसरे कण्ठ तक आते-आते इन गीतों का रूप प्राय: बदल जाता है।

चैत के महीने में शहरों में भी गाँवों की तरह नवरात्रि आदि उत्सव मनाये जाते हैं। चैत के विशिष्ट गीतों का क्षेत्र बहुत व्यापक नहीं है, परन्तु बुन्देलखण्ड, कुरुक्षेत्र, मालवा, गुजरात, अवध, गढ़वाल आदि स्थानों पर चैत्र-सम्बन्धी पद पाये जाते हैं—यद्यपि उन्हें चैती गीत नहीं कहा जा सकता। विशुद्ध चैती गीत अभी भी केवल बिहार के विभिन्न क्षेत्रों तथा उत्तर प्रदेश के पूर्वी भागों में ही प्रचलित हैं। ऐसी स्थिति में स्वाभाविक रूप से यह प्रश्न उठता है कि चैती गीतों की यात्रा गाँव से शहर की ओर किस रूप में है?

आठ माह के परिश्रम के बाद, फसल कटने पर खेत-खलिहान के झमेलों से फुरसत पाकर गाये जाते हैं, चैती के गीत। वसन्त में आमों में मंजर लगने के बाद ये भी फलते-फूलते हैं। गाँव-गाँव में पुरुष-समूह के 'आहो रामा', 'हो रामा' के स्वर गूंज उठते हैं। ये स्वर गांव की दीवारों को लाँघकर नगर की सीमा में जा पहुंचते हैं। इन स्वरों का सम्मोहन ही ऐसा है जो किसी क्षेत्र-विशेष का मोहताज नहीं रह जाता। अनुकरण की प्रवृत्ति प्राणिमात्र में होती है। इसी स्वाभाविकता के कारण अत्यन्त श्रुति-मधुर चैती पदों पर कलाकार-वर्ग का रुझान होना नैसर्गिक ही है।

चैती गीतों में लोक-धुनों का सहज लालित्य-मात्र ही नहीं, शास्त्रीयता भी है। ताल-विशेष में गाई जाने वाली चैती में एक ओर ध्रुपद-धमार की छाया स्पष्ट होती है तो उधर दूसरी ओर रस और भाव की दृष्टि से चैतियों में ठुमरी का-सा आनन्द आता है। गीतों को मुट्ठी में बन्द करके रखना असम्भव होता है। बंजारों की तरह ये गीत सदा एक स्थान से दूसरे स्थान पर घूमते रहते हैं—लोककण्ठ की सवारी पर। एक गायक, दूसरे गायक के मुख से कोई गीत सुनता है और उसका कोई अंश उसे कहीं से छू जाता है तो वह गीत कानों से होकर उसके अन्तर में पैठ जाता है, उसके कण्ठ में उतर आता

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

है। इस तरह एक कण्ठ से दूसरे कण्ठ तक चलते हुए गीतों की यात्रा अनवरत् रूप से चलती ही रहती है।

शास्त्रीय गायकों ने कभी इन चैती पदों को सुना और अपनी शैली में उतारकर इन्हें गाना आरम्भ किया। चैती की मौलिकता में उन्होंने कोई कतरब्योंत नहीं की, बल्कि उसकी मौलिकता को सुरक्षित रखते हुए अपनी ओर से कहीं-कहीं सुन्दर स्वर जरूर भर दिये। तरह-तरह से कण्ठ का काम करके उन्होंने चैती गीतों का शास्त्रीयकरण कर दिया। चैती को उन्होंने ठुमरी शैली में गाया और उसे ऐसा रंग-रूप प्रदान कर दिया ताकि उसका आनन्द ग्रामीण एवं शहरी दोनों ही क्षेत्रों में समान रूप से लिया जा सके।

चैती गीतों में स्थाई वाले अंश को छोड़कर अन्तरे की दूसरी पंक्ति में कहीं-कहीं लोग ताल-परिवर्तन करते हैं, यानी सात मात्रा में गाते-गाते वे अन्तरे की दूसरी पंक्ति को आठ मात्रा में गाने लगते हैं। इस पंक्ति में वे तरह-तरह से गलेबाजी का प्रदर्शन करते हैं।

इस तरह चैती गीतों का प्रसार गाँव से शहर की ओर और नगर से महानगर की ओर निरन्तर हो रहा है। बिहार में भी पहले चैती का क्षेत्र अन्यन्त संकुचित था। गंगा के उस पार, अर्थात् उत्तर बिहार में, इसका प्रचलन नहीं था, किन्तु घूमते-फिरते कहीं से ये गीत सुनाई पड़े, मनोहारी लगे तो मिथिला-निवासियों ने भी इन्हें प्रेम से अपना लिया और चैती पद वहाँ भी लिखे तथा गाये जाने लगे।

चैती गीतों का सम्पर्क-सूत्र इस तरह क्रम से बढ़ता ही चला गया। चैती गीतों की मौलिकता बरक़रार रही पर विभिन्न कण्ठों में जाते रहने के कारण इसकी विविधता निरन्तर बढ़ती रही। चैती गांव की चहारदीवारी से निकलकर शहर के मंच पर आई और विभिन्न साज-सज्जा से विभूषित होकर जनमानस पर छा गई।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

5

चैती के प्रकार

हम पहले कह आये हैं कि चैत्र के महीने में गाये जानेवाले गीतों को 'चैती' या 'चैता गीत' कहते हैं। भोजपुरी में इसके एक प्रकार-विशेष को 'घाँटो', मगही में 'चैतार' और मैथिली में 'चैतावर' कहते हैं। लोकगीतों के जितने भी प्रकार हैं, उनमें माधुर्य, सरलता एवं कोमलता की दृष्टि से चैती अद्वितीय है।

सामान्यतया चैती गीत तीन प्रकार के होते हैं—

1. साधारण चैती,
2. झलकुटिया चैती,
3. घाँटो चैती।

1. साधारण चैती

बहुधा एक ही गायक ढोल आदि वाद्यों के साथ इसे गाता है। यद्यपि यह समूह में भी गाई जाती है, किन्तु इसमें जोश और मस्ती का वह उत्कर्ष नहीं दिखाई पड़ता जो घाँटो चैती में होता है। साधारण चैती के भी कुछ प्रभेद किये जा सकते हैं—

(क) खड़ी चैती,

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

(ख) निर्गुण चैती,

(ग) झूमर चैती ।

(क) खड़ी चैती : यह एक स्वर में भी गाई जा सकती है । इसमें प्रयुक्त होनेवाले स्वर अधिक परिष्कृत एवं ललित होते हैं । कहरवा ताल का प्रयोग इसमें अच्छा लगता है । नारी-स्वर में भी इसे सुना जा सकता है—

सैंया मोरा रे कुसुमी बोअइह हो रामा
चम्पा लगइह, चमेली लगइह
खेतवनि कुसुम फुलइह हो रामा ।

(ख) निर्गुण चैती : इस प्रकार के चैती गीतों का भाव भक्तिपरक होता है । एक उदाहरण देखिए–

पिया से मिलन हम जाएब हो रामा
अतलस लँहगा कुसुम रंग सारी
पहिर पहिर गुन गाएब हो रामा ।

(ग) झूमर चैती : इसका ताल अधिकतर द्रुत कहरवा होता है । इसका विषय लोकगीत की झूमर शैली की तरह शृंगारिक होता है—

पाकल पाकल पनवा के खिलिया लगवलीं अहो रामा
ओही पनवा पिया के खिलवलीं अहो रामा ।

2. झलकुटिया चैती

'झलकुटिया' शब्द की व्युत्पत्ति इस प्रकार की जा सकती है—'झाल + + कूट + इया' (प्रत्यय) । झाल कूटने की कल्पना से ही इस गीत का नाम 'झलकुटिया' पड़ा है । स्पष्ट है कि इस प्रकार की चैती सामूहिक रूप से झाल कूटकर या बजाकर गाई जाती है । सामूहिक रूप से इस गीत को गाते समय गानेवाले दो दलों में विभक्त हो जाते हैं । पहला दल एक पंक्ति कहता है, तो दूसरा दल उसके टेकपद को जोरों से गाता है । उदाहरणार्थ यह गीत देखिए—

पहला दल—रामा चइत की निंदिया
बड़ी बइरिनियाँ
दूसरा दल—हो रामा सुतलो बलमुआ
पहला दल—नाहीं जागे हो रामा
दूसरा दल—सुतलो बलमुआ ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

इस प्रकार गाने के बीच में उसका क्रम कभी नहीं टूटता और प्रत्येक दल को गाते समय किंचित् विश्राम भी मिल जाता है। पहला दल पहली पंक्ति को जिस स्वर में गाता है, दूसरा दल उससे उच्च स्वर में टेकपद को गाता है। जब चैता-गायन अपनी मस्ती की पराकाष्ठा पर पहुंचता है तो गायकवृन्द खुले कंठ से उच्चतम स्वर का प्रयोग करते हैं। दोनों ओर से लगातार झूम-झूमकर तेजी से झाल बजाया जाता है। गवैये भावावेश में आकर घुटनों के बल खड़े हो जाते हैं। 'हो रामा', 'आहो रामा' की गगन-व्यापी ध्वनि से धरा गूंज उठती है। चैत का महीना, चैत की रातें, चैत के राग, झाँझ की झनकार तथा ढोलक और कण्ठ के स्वर मिलकर एक अजीब खुशनुमा समाँ बाँध देते हैं। इस प्रकार की चैती की तरह ही 'खँजरिया चैती' भी होती है।

खँजरिया चैती : खँजरी+इया (प्रत्यय)। इस व्युत्पत्ति से स्पष्ट है कि इस प्रकार की चैती में खँजरी का प्रयोग किया जाता है। इसे पुरुष-समूह ही गाता है। इसमें वर्ण्य-विषय की स्वतंत्रता है, किन्तु गायन-शैली में एक व्यक्ति या एक दल आधी पंक्ति कहता है और दूसरा व्यक्ति या दल उसे दुहराता है। जैसे :

पहला दल–अहो रामा कहमा के कुम्हरा
दूसरा दल–अहो रामा कहमा के कुम्हरा
पहला दल–अरे रचले घइलिया
दूसरा दल–अहो रामा रचले घइलिया हो रामा।

बीच-बीच में विविधता लाने के लिये कभी-कभी चौदह मात्रा के जत ताल को बदलकर गायक इसे आठ मात्रा के कहरवा में भी गाने लगते हैं। उसके तरह-तरह के बोल बनाये जाते हैं। कभी मध्य लय रहती है, कभी द्रुतलय हो जाती है। इस तरह कहरवा गाते-गाते फिर जतताल में गीत पकड़ लिया जाता है। इस प्रकार की शैली से गीतों की सरसता बनी रह जाती है। स्वरों के आरोह-अवरोह में भी दोनों दलों के बीच यही परिवर्तन-क्रम चलता रहता है।

3. घाटो चैती

मगही में इसे 'चैतार घाटो' भी कहा जाता है। 'घाटो शब्द संभवतः 'घोटना' क्रिया से बना है। घोटने का अर्थ है, खूब मथना या बिलोना। इस प्रकार के चैती गीत में गायक बड़ी मस्ती से झूम-झूमकर गाते हैं। यंत्रवत्

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

इतनी तेजी से वे ढोल या झाल बजाते हैं कि 'घाटो' शब्द बड़ा सार्थक प्रतीत होने लगता है। जहाँ तक घाटो चैती गाने का प्रश्न है, यह गीत ठीक झलकुटिया चैती की तरह गाया जाता है। इसमें भी गायकों के दो दल हो जाते हैं। यह गीत विशेषकर पुरुष-वर्ग ही गाता है। इस गीत में जैसा जोश और अलमस्ती है उस ढंग से गाना किसी स्त्री-कण्ठ के वश की बात नहीं है। एक बात यह भी है कि इस जोश से स्त्री-कण्ठ से गाने पर निश्चय ही वह स्वर-माधुर्य नहीं रह जाएगा। पुरुष-कण्ठ से यह गीत अधिक अच्छा एवं प्रभावशाली प्रतीत होता है। इस गीत के साथ गवैये ही ढोल और झाल बजाते हैं। पहला दल एक पंक्ति गाता है दूसरा दल टेकपद को उससे ऊँचे-स्वर में गाता है। इस गीत में भी ताल-परिवर्तन होता है—यानी सात मात्रा गाते-गाते विविधता या वेग लाने के लिये कहरवा का प्रयोग किया जाता है। एक उदाहरण देखिए—

पहला दल—हरि मोरा गेलन मधुबनवाँ
दूसरा दल—हो रामा चइत रे मासे।
पहला दल—रामा बिरही पपीहा बोलइ आधी रतिया
दूसरा दल—हो रामा चइत रे मासे।

घाटो चैती में एक और पद देखिए—

लगइ सुन्न भवनमा हो रामा, कान्हा रे बिनु
मुनहर घरवा में सुतली सेजरिया
हरिजी के देखली सपनमा हो रामा
कान्हा रे बिनु।

इस गीत का अन्तरा दो पंक्तियों का है। दूसरे दल के लोग दो पंक्तियों के बाद टेक पद 'हो रामा, कान्हा रे बिनु' को जोरों से दुहराते हैं।

झलकुटिया चैती की तरह ही घाटो चैती को गाते समय भी प्रत्येक दल को विश्राम मिलता है। पहला दल जिस स्वर में गाता है, दूसरा दल उससे उच्च स्वर में टेक पद को दुहराता है। गीत जब अन्तिम अवस्था में पहुंचने लगता है तो गानेवाले उच्चतम स्वर में पहुंचकर एकाएक गाना समाप्त कर देते हैं।

उत्तर प्रदेश के चैती गीतों के तीन भेद किये गये हैं—

(1) चैती, (2) घाटो, और (3) गौरी।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

गायन-शैली के अनुसार तीनों का स्वरूप भिन्न हो जाता है। चैता गौरी का एक उदाहरण निम्न है—

सेज चढ़त डर लागे हो रामा
पायल बाजे ।

कुछ लोग चैता और घाँटो में अन्तर मानते हैं, परन्तु वास्तव में ये अलग नहीं हैं। वुलाकीदास का नाम 'घाँटो' से सम्बद्ध अवश्य है, परन्तु इनकी रचनाओं को देखने से ज्ञात होता है कि चैता और घाँटो में कोई अन्तर नहीं है। हाँ, गायन शैली की दृष्टि से साधारण चैता और घाटो में अन्तर मात्र इतना ही देखा जा सकता है कि साधारण चैता के गायन का ढंग उतना अलमस्त एवं ओजपूर्ण नहीं होता, जितना घाटो का होता है, इसलिये यह नारी-स्वर में भी गाया जा सकता है। विशेप स्वरों के प्रयोग के कारण यह धीमी लय में गाया जाता है, जबकि चैता घाटो हमेशा उच्चतम स्वरों के प्रयोग के साथ द्रुत से द्रुततर लय में गाया जाता है।

चैती-गायन की विभिन्न शैलियाँ

चैती-गायन की अपनी एक विशेष शैली है, अपना एक विशेष ढंग है।

(1) इसमें गीत की प्रत्येक पंक्ति के आरम्भ में 'अहो रामा' या 'रामा' पद का प्रयोग होता है। यद्यपि पंक्ति के पूर्व ऐसे प्रयोग का कठोर नियम नहीं है। उदाहरणार्थ 'अहो रामा' या 'रामा' से आरम्भ होनेवाले निम्न पद देखें—

आहो रामा सूतल रहलीं पिया संगे सेजिया हो रामा
बाते-बाते, लागि गइले पियवा से रेरिया हो रामा।

× × ×

रामा नदिया के तीरवा चनन गाछि बिरवा रामा
रामा मोर पिछुवरवा कोंहार भइया हितवा हो रामा।

कुछ ऐसे भी चैती गीत हैं जिनके आरम्भ में 'रामा' या 'हो रामा' का प्रयोग नहीं है। जैसे—

हमरे अंगनवा चैत रे मासे
चइत मासे फूलेला गुलबवा हो रामा
चइत रे मासे।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

इस तरह पंक्ति के आरम्भ में उक्त नियम का कठोर बन्धन नहीं है, किन्तु पंक्ति के अन्त में 'हो रामा' पद का प्रयोग आवश्यक है। जैसे—

कुसुमी लोढ़त कँटवा गड़ि गेल हो रामा
राजा जी के बगिया।

पंक्ति के अन्त में 'हो रामा' पद का प्रयोग साधारण झलकुटिया एवं घाटो चैती में सामान्य रूप से अवश्य होता है।

(2) चैती-गायन की दूसरी विशेषता यह है कि इसमें दूसरी पंक्ति के प्रथम दो पदों की आवृत्ति उस पंक्ति का गायन समाप्त हो जाने के बाद पुनः की जाती है; अर्थात् दूसरी पंक्ति के प्रथम दो पद टेक का काम करते हैं। एक उदाहरण देखें—

मोर चुनरिया सैंया तोर पगड़िया
एकहि रंगे रंगायब हो रामा,
एकहि रंगे।

इस गीत की दूसरी पंक्ति के प्रथम दो पद 'एकहि रंगे' हैं। ये ही पद इस पंक्ति के गाने के बाद टेक पद के रूप में पुनः गाये जाते हैं। गाने के बीच में यही क्रम क्रमशः चौथी, छठी आदि सम-पंक्तियों में चलता रहता है।

(3) चैती-गायन की तीसरी विशेषता यह है कि इसके गाने में प्रथम अवरोह, फिर आरोह और पुनः अवरोह होता है। अर्थात् प्रारम्भ में मन्द स्वर, बीच में उच्च स्वर और अन्त में पुनः मन्द स्वर का प्रयोग किया जाता है। चैती गीतों की स्वर-लिपि देखने पर यह बात स्वतः स्पष्ट हो जाती है।

(4) चैती-गायन की चौथी विशेषता यह है कि आरोह, अवरोह के क्रम से घाटो चैती का गायन इस प्रकार होता है कि इसमें प्रथम तो उच्चतम स्वर का प्रयोग होता है फिर उच्च स्वर का व्यवहार होता है और अन्त में मन्द स्वर आता है। आरोह, अवरोह के क्रम से गाया जाने वाला एक गीत इस प्रकार है—

अहो रामा कवना दहे बोलेले चकवा चकइया हो रामा
कवना दहे बोलेले बिरही कोइलिया हो रामा
कवना दहे।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

इस गीत में 'हो रामा' और 'कवना दहे' में लिम्बित स्वर का प्रयोग किया जाता है।

(5) चैती गीतों में बहुधा लय-परिवर्तन होता है। कोई पद जो सात मात्रा में गेय होता है, वह तो टेक पंक्ति हो जाती है और अन्तरे की दो पंवितयों में से दूसरी पंक्ति आठ मात्रा में बदल जाती है। उदाहरणार्थं एक चैती गीत देखें—

चैत मासे चुनरी रंगा दे हो बालम
झमकि झूमि चलबो ।
चुनरी रंगा दे, अंगिया सिया दे
कोरे कोरे गोटवा टँका दे हो बालम
झमकि झूमि चलबो ।

यह गीत पहले सात मात्रा से आरम्भ होता है। अन्तरे की प्रथम पंक्ति को कहने के बाद ही गायक ढोलकवाले को लय-परिवर्तन का संकेत देता है और 'कोरे कोरे गोटवा टँका दे हो बालम' इस पंवित में तुरन्त ही आठ मात्रा की लय पकड़ ली जाती है। इस लय में आने के बाद गायक स्वेच्छा से उसे तरह-तरह से गाते हैं। दो-तीन आवृत्ति तक उनमें अपना कला-ज्ञान दिखलाते हैं और फिर स्थाई की पंक्ति पकड़ने से पूर्व पुनः वादक-सहयोगी को संकेत देकर सात मात्रा पर आ जाते हैं।*

यह तो सर्वविदित है कि चैती-गायन की एक विशिष्ट शैली है, किन्तु इस शैली में सिर्फ चैत के गीत गाये जाते हों, ऐसा कोई नियम-बन्धन नहीं है। यह अवश्य है कि इस शैली के गीत एक अवधि-विशेष के अन्तर्गत ही गाये जा सकेंगे। गाँवों में बहुधा कीर्तन, रामायण आदि का गायन चैत के महीने में चैती-गायन-शैली में होता है। रामायण की चौपाई की दो पंक्तियाँ कहकर चैती शैली में एक बोल लगाकर उसे गाया जा सकता है। यथा—

जनम लिये रघुरैया हो रामा, चइत महिनवाँ ।

अथवा

घरे घरे बाजेला बधइया हो रामा, अवध नगरिया।

इस बोल के बाद चौपाई की दो पंक्तियाँ गाई जायेंगी—

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

नौमी तिथि मधुमास पुनीता
सुकल पच्छ अभिजित हरिप्रीता ।
मध्यदिवस अति सीत न घामा
पावनकाल लोक विश्रामा ।[1]

इसके बाद बोल की दो-तीन बार या दो-तीन तरह से आवृत्ति करने के बाद आगे की चौपाइयाँ गाई जाती हैं । इस तरह का एक और उदाहरण देखें जो रामचरितमानस के फुलवारी-प्रसंग से लिया गया है—

बोल—राम लखन आए बगिया हो रामा
फुलवा लोढ़न को ।
चौपाई—देखन बाग कुँअर दुइ आए ।
बय किसोर सब भाँति सुहाये ।।
स्याम गौर किमि कहौं बखानी ।
गिरा अनयन नयन बिनु बानी ।।[2]

प्राय: चैती-धुन में सात मात्रा में रामायण की चौपाइयाँ गाई जाती हैं, उनके बीच के बोल आठ मात्राओं में गाये जाते हैं । तीन-चार आवृत्ति के बाद पुन: दूसरी चौपाई गाने के पूर्व गायक सात मात्रा पर आ जाता है, लेकिन इस तरह का कोई नियम नहीं है । गायक अपनी इच्छा से इसे ठीक विपरीत ढंग से भी गा सकते हैं; यानी चौपाइयों को आठ मात्रा में कहकर बीच के बोलों को भी सात मात्रा में गाया जा सकता है । गोस्वामी तुलसीदास की दोहावली, कवितावली से भी इस प्रकार की रचनाएँ सुनने को मिलती हैं ।

ऐसा कहा जाता है कि चैती वैष्णवों की देन है । मूलत: चैती लोक-संगीत है । चैत में हर कहीं गौनिहारिनें, शहनाईवाले चैती गाते-बजाते दिखाई पड़ते हैं पर शास्त्रीय चैती ने लोकधुनों को परिष्कृत करके अनूठी लोच के साथ बनारसी बाना पहनाया है । भरत के अनुसार, चैती हिंडोल के पुत्र-पुत्रवधुओं में एक नाम है । कुछ गायक चैती-गायन में पूर्वी दादरा, चैती-ठुमरी, चैता-भैरव एवं चैती-भैरवी को भी शामिल करते हैं ।

चैती की सामयिकता, स्थानीयता एवं बोली

चैती की सामयिकता का प्रश्न विवादास्पद नहीं है । नाम के अनुरूप

1. रामचरितमानस; बालकाण्ड ।
2. वही ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

चैत मास से सम्बन्धित होने के कारण इसका सम्बन्ध चैत से ही होना चाहिये। किन्तु चैत के महीने को कहीं-कहीं 'मधुमास' की भी संज्ञा दी गई है।[1] मधुमास, वसन्त का प्रतीक है। स्पष्ट है कि वसन्त के आरम्भ होते ही चैती गीतों की मानसिकता वन जाती है। माघ की पंचमी से वसन्त-गीतों की स्वर-लहरियाँ गूंजने लगती हैं। चैती की भूमिका के रूप में होली-गीतों से गाँव के गाँव गूंज उठते हैं। चैत का महीना आते-आते यह उल्लास अपनी चरम सीमा पर पहुंच जाता है और नदी-किनारे, अमराइयों में, खेतों में, गाँवों के चौपालों में गूंजने लगते हैं—चैती के मादक श्रृंगार-गीत !

लोकगीतों और गाथाओं में स्थानीयता का पुट विशेष रूप से पाया जाता है। वर्णन जो भी हो, किन्तु स्थानीय प्रभाव गहरा होता है। यही कारण है, जिस जनपद में जो गीत प्रचलित हैं, उनमें वहाँ के लोगों का रहन-सहन, रीति रिवाज, आचार-व्यवहार सजीव रूप में चित्रित रहता है। लोक-संस्कृति इन गीतों में अपने पूर्ण वैभव के साथ प्रतिबिम्वित होती है। राजस्थान की लोक-गाथाओं में वहाँ के वलिदानी वीरों की गाथा का बहुत सुन्दर वर्णन हुआ है। वहाँ की क्षत्राणियों की आन और मान-भावना अपने दिव्य रूप में चित्रित है। वह अपने पति को छोड़ सकती है, पर अपना मान नहीं छोड़ सकती।

मारवाड़ में यातायात का एक साधन ऊँट है। ढोला-मारू रा दूहा में एक स्त्री ऊँट की सवारी करती दिखाई पड़ती है। बिहार लोकगाथाओं में कुँअर सिंह का नाम पाया जाता है। मैथिली लोकगीतों में मिथिला की अनेक सामाजिक प्रथाओं का वर्णन है। उत्तर प्रदेश के पहाड़ी जिलों—नैनीताल, अलमोड़ा आदि में सर्दी अधिक पड़ती है अतः वहाँ के लोगों के लिये गर्मी असह्य है। उधर की कोई कन्या अपने पिता से कहती है कि आप मेरा विवाह छानविलौरी नामक स्थान में मत कीजियेगा, क्योंकि वहाँ गर्मी बहुत पड़ती है। वहाँ खेतों में काम करते समय पसीने से मेरी अंगिया भीग जाएगी।

यहाँ हमें चैती गीतों की स्थानीयता एवं बोली पर विचार करना है। चैती गीत विशेष रूप से विहार तथा उत्तर प्रदेश के पूर्वी भाग में प्रचलित हैं। यों, चैत्र मास में विभिन्न पर्वों से सम्बन्धित गीत भारत के अन्य प्रान्तों में भी गेय हैं, किन्तु अपनी विशिष्ट शैली में चैती के इन पदों की स्थानीयता निश्चय ही सीमित है।

---

1. ऋतुसंहार : कालिदास, 6/26.

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

उड़ीसा में चैत के महीने में प्रत्येक सोमवार को जगन्नाथ जी की पूजा की जाती है जिसमें उड़िया बोली में निम्न गीत गाया जाता है—

भले बिराजे जू उड़ीसा जगन्नाथपुरी में
भले बिराजे जू।
कवसें छोड़ी मथुरा बिंद्रावन, कवसें छोड़ी कासी
झारखंड में आन बिराजे बिंद्रावन के वासी
तुम तो भले बिराजे जू।

कुमाऊँ में वहाँ की स्थानीय बोली में प्रचलित वसन्त-गीतों को **ऋतुरैण** या **रितुरैण** कहा जाता है। इस शब्द की उत्पत्ति 'ऋतुराज', 'ऋतुराजण', 'ऋतुरायण' से हुई है। ये चैत्रमास में गेय हैं जिन्हें **चैतू** की संज्ञा भी दी गई है—

यो आयो चैंतो को महीना
ईजू मेरी रोली
मेरी ईजूँ की बाँधी लटी
छै महीना में खोली।

भाव है कि चैत्र का महीना आ गया है। मेरी माँ रोयेगी। माँ की बाँधी हुई लट छः महीने में खुलेगी।

चैत्र मास में नववर्ष का आगमन माना जाता है। अतः पुष्प-मंजूषाओं में फूल भरकर ऋतुराज वसन्त का स्वागत किया जाता है। बालिकाएँ पहले गाँव के मुखिया के घर जाकर नववर्ष के लिये मंगलगीत गाकर धन-धान्य से पूर्ण तथा दीर्घजीवी होने की कामना करती हैं। यह पर्व 'फलसंज्ञान' या 'पुष्प-संक्रान्ति' कहलाता है।

यहाँ ऋतुरैण और चैतू के अतिरिक्त 'कफलिया' भी वसन्तकालीन गीत हैं। इन गीतों में चैत्र मास में पकी फसल 'काफल' को वर्ण्य-वस्तु बनाया जाता है। कुमाऊँ में चैत के महीने में नववर्ष के साथ 'वारामासी' गीत गाया जाता है। इसे गानेवाले 'हुड़कियाँ' या 'वादी' कहे जाते हैं। जाति-विशेष के लोग चैत के पूरे महीने यह गीत घर-घर जाकर सुनाते और इनाम पाते हैं—

फुलवो बिंदिया, फूलै बुरूंशी
सबै फूल फूलीगो चैतोई माशा।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

'रितुरैंण' गीत कुमाऊँ की 'भेंटौली' प्रथा से सम्बद्ध है। इस प्रथा के अनुसार, चैत्र मास में भाई अपनी बहन से भेंट करने जाता है और उसे तरह-तरह के उपहार देता है। बहिन को ऋतु के आगमन की सूचना वसन्त में गाने वाले पक्षियों, जैसे कोयल, न्यौली, कफुवा आदि से मिलती है और वह भाई की प्रतीक्षा में बेचैन हो जाती है।

कुलूत प्रदेश में ऋतु-विशेष में गाये जाने वाले 'कुलुई' गीत बहुत हैं। कुल्लू प्रदेश का एक विशेष गीत 'छींजा' है जिसे स्त्रियाँ वसन्त ऋतु में गाती हैं। पुरुषों के सामने इस गीत को गाने में स्त्रियाँ लज्जा का अनुभव करती हैं। बहुधा बूढ़ी स्त्रियाँ इस गीत के माध्यम से नववधुओं अथवा अन्य युवतियों की हृदय-दशा का ज्ञान प्राप्त कर लेती हैं—

डेई गो चैंतरा रो महीनो
बे फुलटु सोब फूली गेए
हासी हासी जाँदे बे पाँछी
सौब सौब साओ भूली बे गेए।

साधारणतः यह गीत 'निर्शू' या 'विर्शू' उत्सवों के दिनों में गाया जाता है। उत्सव से एक पक्ष पूर्व गाँव की प्रायः सभी स्त्रियाँ घर के कामकाज से निवृत्त होकर एक स्थान पर किसी आँगन में इकट्ठी होकर यह गीत गाती हैं। छींजा गीतों का विशेष धार्मिक महत्त्व नहीं है। सामाजिक एवं आर्थिक कारणों से ही ये गीत चैत या वैसाख के महीनों में गाये जाते हैं।

बघेली और छत्तीसगढ़ी के चैत-गीतों में बुन्देलखण्डी बोली का प्रयोग किया जाता है—

अमरइया में कोइली बोली करै
सुन सगुन रै।
रंग भरी मोरी देहिया गमना मांगे रै
रंग भरी मोरी चोलिया गमना मांगे रै।

बुन्देलखण्ड के चैती-फसल-सम्बन्धी गीतों में रामारे, रमटेरा, दिनरी और बिलवारी मुख्य हैं।

गढ़वाल में ऋतु-परिवर्तन को 'दाई का फेरा' कहते हैं। यह चैत में,

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

यानी मधुमास में, होता है। इसमें वसन्त का स्वागत 'झुमैलो' गीत द्वारा गढ़-वाली बोली में होता है—

आई गैन ऋतु बौड़ीं, दाईं जैसो फेरो, झुमैलो
फूली गैन वणु बीच ग्वीराल बुराँस।

अर्थात् दाईं के फेरे की तरह मधुमास लौट आया है। वनों के बीच बुरांस और कचनार फूल गए हैं।

इन लोकगीतों में मधुमास में विकसित होने वाली फ्यूली के प्रति बड़ी ममता दिखाई गई है। चैत्र मास में कुमारी कन्याएँ फ्यूली के पुष्प चुन-चुनकर सुबह-सुबह घर-घर की देहरियों पर डाल जाती हैं और वसन्त के स्वागत में वासन्ती गीत गाती हैं।

मालवा में चैत्र मास के कृष्ण पक्ष से चैत्र शुक्ला तृतीया, यानी गौरी-पूजा तक सम्पूर्ण परिवेश गेय गीतों से अनुप्राणित रहता है। यहां मालवी भाषा में चैत्र मास या मधुमास में गाये जाने वाले गीतों में उद्यान-गीत, आम्रगीत, शीतला माता के गीत, गणगौर गीत आदि मुख्य हैं।

मालवा की भाँति चैत के महीने में राजस्थान में भी गणगौर पूजा होती है। पूजा का मुख्य दिन चैत्र शुक्ला तृतीया का होता है। तृतीया या चतुर्थी को गवर की सवारी निकलती है। चैत्र बदी अष्टमी को राजस्थान में स्त्रियाँ 'घुड़ला गीत' या 'घुड़ल्यो घूमेला' गीत राजस्थानी बोली में गाती हैं। इस दिन स्त्रियाँ टोली बनाकर कुम्हार के घर जाती हैं, वहाँ से अनेक छिद्रों वाली छोटी मटकी में एक जलता हुआ दीपक रखकर यह गीत गाती हुई घर लौटती हैं। यहाँ की स्त्रियाँ चैत्र मास में लोटियों के गीत भी गाती हैं। कुमारी या विवाहित स्त्रियाँ खाली घड़ा लेकर किसी सरोवर या कुएँ के पास जाती हैं, वहाँ जलदेवता की पूजा करती हैं और फिर जल से भरा कलश लेकर वापस लौटती हैं। यह गीत उसी समय गाया जाता है।

गुजरात में चैती गीत उपलब्ध नहीं होते, किन्तु उनके 'गरवा' गीतों में चैत, फागुन एवं वसन्त का चित्र खींचा गया है—

जाओ वाँ हो गिरधारी
जहाँ खट रुत खोई है सारी।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

चित चैत में लगी उदासी
मैंने चाहा था खाऊँ फाँसी।

महाराष्ट्र में स्त्रियाँ 'चैत्रांगणा' गाती हैं। सम्भवतः इसीलिये इस गीत का नाम 'चैत्र+अंगणा' पड़ा है। इन गीतों में मराठी भाषा का प्रयोग होता है।

व्रज प्रदेश में चैत के महीने में नौ दुर्गा के गीत गाये जाते हैं, जो व्रज-भाषा में होते हैं।

विहार के छोटा नागपुर पठार और राजमहल की पहाड़ियों में 'सरहुल' नामक त्योहार मनाया जाता है। इसे 'वा' या 'खद्दी' भी कहते हैं। चैत के महीने में जब हवा का भारीपन समाप्त हो जाता है, वन- उपवन के वृक्षों में नये-नये पत्ते निकल आते हैं, तब वन के निवासी आदिवासी स्त्री-पुरुष बड़े उल्लास से प्रकृति-पूजा करते हैं। चैत से सम्बन्धित इनका एक गीत देखिये—

चैत झड़ी कोय पेलो
रासे रासेरआ बरेआ लागी
गिरगीन ओड़अए कोए पेलो।[1]

विहार में मैथिली में 'चैतावर' गाया जाता है। यह मिथिला जनपद की भाषा है जिसमें दरभंगा, तिरहुत, मधुवनी, आदि भाग आते हैं। मैथिली भाषा का एक चैती गीत देखिए—

गहरी नदिया गगरियो ने डूबइ
कौने ठाढ़ पछिताउ हो रामा, श्याम रे विनु।

मगही बोली मगध प्रान्त के अन्तर्गत पटना, गया तथा आसपास के क्षेत्रों में बोली जाती है। यहाँ चैती गीतों को 'चैतार' कहा जाता है—

राम घरे अइहें पहुनमा मोरे रामा
रात सबरी देखलन सपनमा हो रामा।

---

1. सरहुल एक अंग चैती उमंग का (लेख) : सत्यदेव नारायण सिन्हा, धर्मयुग, 4 अप्रैल 1976 अंक।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

भोजपुरी पूरे बिहार की ही नहीं, उत्तर प्रदेश के पूर्वी भाग तथा कुछ अन्य स्थानों की भी भाषा है। भोजपुरी का एक चैती गीत देखिए—

सैंया मोरा रे कुसुमी बोअइह हो रामा
चम्पा लगइह चमेली लगइह
खेतवनि कुसुम लगइह हो रामा।

बिहार के प्राचीन अंग-जनपद अर्थात् वर्तमान भागलपुर एवं कोशी प्रमण्डल में अंगिका बोली का प्रयोग होता है। एक चैती गीत देखिए—

एङना फुलैलै फुलगेंनवा हो रामा
पिया नहिं ऐलै।

वज्जिका बोली के क्षेत्र चम्पारण, मोतिहारी, मुजफ्फरपुर, वैशाली आदि हैं। यहाँ का एक चैती गीत उदाहरणस्वरूप निम्नवत् है—

लाल लाल टेस पलास बन झलकइ
लाल लाल पतिओ में टिकोलो जे झमकइ
चुनरी लगइ मनभाओन हो रामा, चइत माहे।

शुद्ध भोजपुरी में मिश्रित बोली का प्रयोग बहुधा मुस्लिम लोकगीतों में होता है। ऐसे गीत बिहार तथा उत्तर प्रदेश में सुने जाते हैं—

काहे अइसन हरजाई हो रामा
तोरे जुलुमी नयना तरसाई हो रामा।

उत्तर प्रदेश के पूर्वी भाग में भोजपुरी भाषा से मिलती-जुलती बोली में चैती गीत मिलते हैं। यहाँ की भोजपुरी बिहार की भोजपुरी से कुछ अलग प्रतीत होती है, किन्तु इसमें अनोखा लालित्य मिलता है। मधुर गायन-शैली एवं मन लुभाने वाली भाषा श्रोताओं को आत्मविभोर कर देती है। अवध की शामें राम-जन्म सम्बन्धी चैती पदों एवं रामायण के स्वर आदि से सजी होती हैं। अवधी में एक चैती गीत देखिए—

चैत मासे चुनरी रंगाये हो रामा
लाली रे लाली।

बलिया, गाजीपुर, मिर्जापुर, गोरखपुर, इलाहाबाद और बनारस आदि

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

स्थानों पर गाई जाने वाली चैतियों में यों भोजपुरी भाषा ही प्रयोग में लाई जाती है, किन्तु बनारस, मिर्जापुर आदि जगहों की बोली की सरसता का एक अपना ही रंग है। कवि छबीले की रचनाओं की छबीली छटा मन को मुग्ध कर लेती है—

सुगना बोले रे हमरी, अटरिया हो रामा
एरी छाये 'छबीले' रे बिदेसवा
रहि रहि मारे रे बिरही कटरिया हो रामा।

बोलचाल की भाषा में हम इसे बनारसी बोली भी कह सकते हैं। बनारस में वसंत-पंचमी से चैत्र पूर्णिमा तक वसन्तोत्सव की धूम मची रहती है। होली के बाद पहले मंगल को 'बुढ़वा मंगल' कहते हैं। इस अवसर पर तीन दिन का जलोत्सव मनाया जाता है। बुढ़वा मंगल के बाद वहाँ गुलाब-बाड़ी सजा करती थी, जिसमें चैती का गायन होता था।

चैती की सामयिकता का प्रश्न जितना सीमित है, इसकी स्थानीयता का उतना ही विस्तृत है। चैत सम्बन्धी पद जहाँ पाये जाते हैं, ऐसे स्थानों का बाहुल्य होने के कारण ही इसकी स्थानीयता विस्तृत हो जाती है, किन्तु विशुद्ध चैती की स्थानीयता मात्र बिहार एवं पूर्वी उत्तर प्रदेश तक ही सीमित है।

विभिन्न बोलियों का समावेश होने पर भी चैती गीतों के भावों में समन्वय है। प्रकृति के शाश्वत् सत्य की भाँति हर मनुष्य की ऊपर की भाषा भिन्न हो सकती है, पर मन की भाषा एक ही होती है।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

खण्ड– 2

चैती-चयन

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

चैती गीतों का अनुक्रम

भोजपुरी चैतियाँ

1. कौन मास फूलेला गुलववा
2. झिर-झिर झिर-झिर बहेला पवनवां
3. रामा मघवा फगुनवा सभे दिन बीतल
4. रामा सूतल सैंया के जगवलू
5. आरे मैं धनि वारी हो
6. डमरू वाला रे जोगिया
7. कान्हा चरावे धेनु गइया

मगही चैती गीत

8. अहो रामा बाबा फुलवरिया में
9. सुतला में काहेला जगैब ऽ हो रामा
10. लगइ सुन्न भवनवां हो रामा
11. राम जी के बनमा पैठौल ऽ हो रामा

मैथिली चैतावर

12. नइ भेजे पतिया
13. बहत बयरिया हो रामा
14. चैत बीति जयतइ हो रामा
15. रतिया के देख लौं सपनवाँ
16. चैत मासे चुनरी रंगा दे हो पिया

अवधी चैतियाँ

17. गमकील फुलवा फुलाने हो रामा

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

18. यहि ठइयाँ मोतिया हेराय गे
19. चैत मासे चुनरी रंगाये हो रामा

बनारस में गाई जाने वाली चैतियाँ

20. सुगना बोले रे हमरी अटरिया
21. काहे फिरत बौरानी हो रामा
22. सब बन अमवां बौरान लागे
23. नाहीं भूले रे तुमरी सुरतिया
24. जुई का फुलवा हथवा लगत
25. सब रस चुअऽलऽ नैनवा
26. हाँ हाँ कि नैन भर के
27. अरे हाँ कि चलौ सखिया
28. सोवत निंदिया जगाई
29. नाजुक बलमा रे

साहित्यिक चैतियाँ

30. मोसे सेजिया चढ़लि नहिं जाई—भारतेन्दु हरिश्चन्द्र
31. फूलन लागे नवल गुलबवा— ,, ,,
32. चम्पा गाछी भँवरा लोभइलै—पं० अम्बिकादत्त व्यास
33. सूतल भयल भिनसरवा— ,, ,,
34. जोबन देत झकझोरवा—पं० किशोरीलाल गोस्वामी
35. जोबन नाहक मोर जाई— ,, ,,
36. काहे अइसन हरजाई—सैयद अली मुहम्मद 'शाद'
37. सपना देखीला बलखनवाँ—सुरुज लाल
38. चाँदनी चितवा चुरावे—विन्ध्यवासिनी देवी
39. सैंया मोरा रे कुसुमी बोअइह— ,,
40. चैत के रतिया अकसवा में— डॉ० शान्ति जैन

अंगिका चैती

41. एङना फुलैलै फुलगेनवा—पं० परमानन्द पाण्डे

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

वज्जिका चैती

42. चइत माह परम सोहाओन— डॉ० अजितनारायण सिंह तोमर

निर्गुण चैतियाँ

43. भावे नाहीं मोहि भवनवाँ—केसोदास जी
44. कुबुधि कलवारिनि बसेले— दरिया साहब
45. पिया से मिलन हम जाएब— कबीरदास

• •

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

चैती-गीत

भोजपुरी चैतियाँ

(1)

[विषय : चैत मास में प्रकृति का स्वरूप ।]

कौन मास फूलेला गुलबवा हो रामा
कि कौना रे मासे ।
बेला फूले चमेली फूले
अवरू फूलेला कचनरवा हो रामा ।
गेंदवा जे फूले रामा माघ रे फगुनवाँ
चैत मासे फूलेला गुलबवा हो रामा ।
अमवा की डाली पे लागल मोजरिया
कुहू कुहु बोलेले कोयलिया हो रामा ।

(2)

[विषय : चैत के महीने में राधा और कृष्ण का वर्णन ।]

झिर झिर झिर झिर बहेला पवनवाँ हे राम
धीरे हो धीरे, रामा धीरे–धीरे बहेला जमुनवाँ
हो रामा, धीरे–धीरे ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

ए पार गंगा कि ओ पार जमुना हो राम
बीचे हो बीचे, रामा बीचे-बीचे फूले फुलवनवाँ
हो रामा, बीचे-बीचे ।

ए पारे श्याम रैया, गैया हो चरावे राम
ओही रे पारे, रामा ओही पारे राधिका नेहाए
हो रामा, ओही पारे ।

कृष्ण जी के सोभेला बाँस के बँसुरिया हो रामा
राधा जी के, रामा राधा जी के सोभे गलहरवा
हो रामा, राधा जी के ।

कृष्ण जी के बाजेला मधुर मुरलिया हो रामा
सुनि सुनि, रामा सुनि सुनि राधिका लोभाए
हो रामा, सुनि सुनि ।

(3)

[भाव : प्रियतम बहुत दिनों बाद घर आये हैं, इसलिए
पत्नी मान किये बैठी है ।]

रामा मघवा फगुनवा समे दिन बीतल हो रामा, चइता मासे
पियवा पियरी ले अइले हो रामा, चइता मासे
रामा नाहीं हम पहिरबि पिया की पियरिया हो रामा, नाहीं रे हम
सूतबि पिया की सेजरिया हो रामा, नाहीं रे हम ।
रामा अपना भइया के लड़िका खेलाइबि हो रामा, हम धनि
लुगरी पहिरि दिन काटबि हो रामा, हम धनि ।

(4)

[भाव : सोये हुए पति को जगाने वाली कोयल के प्रति
पत्नी की प्रतिशोध-भावना इस गीत में चित्रित
हुयी है ।]

रामा सूतल सैंया के जगवलू हो कोइलरि
तोरी मीठी बोलिया लागेला हो रामा ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

रामा अबले तू बोललू कोइलरि साँझि बिहनवा
अब तू बोलेलू निसुरतिया हो रामा ।
रामा अवले तू रहलू कोइलरि वन के कोइलिया
अब तुहू भइल सवतिनिया हो रामा ।
रामा अगिया लगाइबि कोइलरि तोहरी ही बोलिया
जरी से कटाइबि घनि बगिया हो रामा ।

(5)

[भाव : छोटी उमर की लड़की गवना नहीं कराना चाहती; यदि जबरन गवना कर भी दिया गया तो वह पति से न बोलने का निश्चय करती है ।]

आरे मैं धनि बारी हो गवने ना जाइवि रामा ।
मैं धनि बारी ।
आरे गवने मैं जाइवि पर सेजिया न सोइवि रामा
मैं धनि बारी ।
आरे सेजिया मैं सोइबि पर सैंया से न बोलवि रामा
मैं धनि बारी ।

(6)

[विषय : इस चैती में भगवान् शिव का स्वरूप वर्णित हुआ है ।]

डमरू वाला रे जोगिया मन भावे हो रामा
अंग भभूत गले रुंडमाला
शेषनाग लपटाए हो रामा ।
जहाँ जहाँ जाए जोगी धुनिया रमावे
और बिछावे मृगछलवा हो रामा ।

(7)

[विषय : इस गीत में भगवान् श्री कृष्ण का स्वरूप चित्रित हुआ है ।]

कान्हा चरावे धेनु गइया हो रामा
जमुना किनरवा ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

जमुना किनरवा कदमिया के गछिया
ताहि चढ़ि बंसिया बजावे हो रामा ।
मोर मुकुट पीताम्बर सोहे
गले सोभे मोतिया के मलवा हो रामा ।

मगही चैती गीत

(8)

[भाव : पिता एवं पति दोनों के प्रति एक नारी के प्रेम की अनुभूति ।]

अहो रामा बावा फुलवरिया में फूल लोढ़े गैली हो रामा
गड़ि गेलई कुसुम कनकँटवा हो रामा ॥
रामा केई मोरा कँटवा सहेजिए निकालत हो रामा
केई मोरा हरतई दरदिया हो रामा ॥
रामा बावा मोरा सहजे में कँटवा निकलतन हो रामा
सैंया मोरा हरतन दरदिया हो रामा ॥

(9)

[भाव : चैत के महीने में सुबह की मीठी नींद प्रसिद्ध है ।]

सुतला में काहेला जगैल ऽ हो रामा
भोरे ही भोरे ।
रस के सपनवाँ में हलइ अँखिया डूबल
भोरे ही भोरे ।
अंग ही अंग अलसाये हो रामा
भोरे ही भोरे ।
पिया बिन हिया मोरा कुहुंकइ हो रामा
भोरे ही भोरे ।
चंपा के फुलवा मुरझाये हो रामा
भोरे हो भोरे ॥

(10)

[विषय : चैत माह में नायिका द्वारा कृष्ण-वियोग की व्यथा का वर्णन ।]

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

लगइ सुन्न भवनवाँ हो रामा, कान्हा रे बिनु ।
मुनहर घरवा में सुतली सेजरिया
हरिजी के देखली सपनवाँ हो रामा, कान्हा रे विनु ।
खुलि गेलइ वेनिया, उपटि गेलइ निंदिया
पौली न हरि दरसनवा हो रामा, कान्हां रे विनु ।
गहनमा मोरा सबै लगइ दुखदइया
भावे न पियरी चुनरिया हो रामा, कान्हा रे विनु ।
चइत बीति गेल सखी, स्याम नहिं अएलन
रहि रहि जिया घबरावे हो रामा, कान्हा रे विनु ।

(11)

[विषय : राम-वनवास पर प्रजा का दुःख तथा कैकेयी के प्रति क्षोभ ।]

राम जी के बनमा पैठौल ऽ हो रामा
कठिन तोरा जियरा ।
बसिहें न अवधा नगरिया हो रामा
जइहें जहाँ राम के बसेरवा हो रामा
कठिन तोरा जियरा ।
मरियो न गेलइ केकइया निरदइया
जारे मुख कठिन वचनमा हो रामा
कठिन तोरा जियरा ।
राम लखन बिनु सुन्ना हो रामा
नागिन लोटहइ भवनमा हो रामा
कठिन तोरा जियरा ।

मैथिली चैतावर

(12)

[भाव : प्रिय के पत्र की प्रतीक्षा करती हुई नायिका की विरहानुभूति ।]

नइ भेजे पतिया
आयल चैत उतपतिया हे रामा
नइ भेजे पतिया ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

बिरही कोयलिया शब्द सुनावे
कल न पड़य अब रतिया हे रामा
नइ भेजे पतिया ।
वेली चमेली फले बगिया में
जोवना फूलल मोरा अँगिया हे रामा
नइ भेजे पतिया ।

(13)

[भाव : वियोगिनी नायिका पवन से अनुरोध करती है कि वह प्रियतम को मेरी व्यथा से अवगत कराये ।]

बहत बयरिया हो रामा
कि धीमी-धीमी रे ।
झिर झिर झिर झिर पवन बहय
अँखिया झिप झिप जाय
बिन पाहुन छतिया फटय
सेजिया मोहि न सोहाय
कि धीमी-धीमी रे ।
पवन झकोरा मधुर-मधुर
कथिलऽ बहि दुख दीऊ
जाऊ बुझाऊ पाहुना
धनिक बिरह सुधि लीऊ
कि धीमी-धीमी रे ।

(14)

[विषय : चैत में ही प्रिय-मिलन की उत्कंठा अधिक होती है, नायिका का ऐसा भाव इस गीत में चित्रित है ।]

चैत बीति जयतइ हो रामा
तब पिया की करे अयतइ ।
अमुआ मोजर गेल, फरि गेल टिकोरवा
डारे पाते भेल मतवलवा हो रामा ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

(15)

[**भाव :** एक तो प्रिय-वियोग, उस पर पपीहे की बोली । कृष्ण कुब्जा के वश में हैं, यह दुःख भी क्या कम है ?]

रतिया के देखलौं सपनवाँ हो रामा
कि प्रभु मोरा आगल ।
मोहि विरहिन के बान सम लागय
पपिहा क निठुर वयनमा हो रामा ।
खान पान मोहि किछु ने भावय
भावय न सुख के सयनमा हो रामा ।
आप जाय कुब्जा रस बस मेल
छन नहिं मोहि चयनमा हो रामा ॥

(16)

[**भाव :** प्रिय से अनुरोध कर चुनरी रंगाकर नायिका नैहर जाना चाहती है, किन्तु मल्लाह की खोटी नीयत देखकर उसे पति को छोड़कर आने का दुःख होता है ।]

चैत मास चुनरी रंगा दे हो पिया
जैबै नैहरवा ।
चुनरी रंगा दे चोलिया सिया दे
धीरे धीरे बेनिया डोला दै हो पिया
जैबै नैहरवा ।
एक कोस गेली दुइ कोस गेली
तेसरहिं भेंटि गेल धार हो रामा
जैबै नैहरवा ।
घर पछुवरवा में मलहा भैया
हमरा उतारि दे पार हो रामा
जैबै नैहरवा ।
आजुक रैन बहिनि एतहि गमाब
होइत भिनसार उतारब पार हो रामा ।
चान सुरुज सन अपन बालम तेजल
मलहा क कोन बिसवास हो रामा
जैबे नैहरवा ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

अवधी चैतियाँ

(17)

[विषय : चैत के महीने में प्राकृतिक सौन्दर्य का वर्णन ।]

गमकील फुलवा फुलाने हो रामा चैत मासे
रंगील फुलवा फुलाने हो रामा चैत मासे

फुलवा फुलाने बिरिछ हरसाने
पात-पात लहकाने हो रामा, चैत मासे ।

कोकिल बोल सुधारस भीने
बौर झौर झुपसाने हो रामा, चैत मासे ।

मधुवन मदभरे महुआ महकई
कवलन भँवर लुभाने हो रामा, चैत मासे ।

छिउलिन झूपे सुरुख रंग टेसुआ
पंछी लतन हुलसाने हो रामा, चैत मासे ।

महर महर भई सितली निंबिया
पनघट फूल बिछाने हो रामा, चैत मासे ।

• •

(18)

[भाव : नायिका का मोती खो गया है । इधर-उधर ढूंढ़ आई है । पति से पूछने में उसे लाज आती है ।]

यहि ठयाँ मोतिया हेराय गे हो रामा
कहाँ लग ढूंढूं ।

कोठवा पे ढूंढ़ेउँ अटरिया पै ढूंढ़ेउँ
ढूंढ़ि आएउँ सइयाँ की सेजरिया हो रामा
कहाँ लग ढूंढूं ।

सासुजी से पूछेउँ ननद जी से पूछेउँ
सइयाँ से पुछत लजाय गयेउँ हो रामा
कहाँ लग ढूंढूं ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

(19)

[विषय : चैत मास में नायिका के चुनरी रँगाने का वर्णन ।]

चैत मासे चुनरी रंगाये हो रामा
लाली रे लाली ।
चुंदरी रंगाये अंगिया सिलाये
बिच बिच घुंघरू लगाये हो रामा
लाली रे लाली ।
चुंदरी पहिर मैं गयेउँ बजरिया
लागि गै बिरही नजरिया हो रामा
लाली रे लाली ।

बनारस में गाई जाने वाली चैतियाँ

(20)

सुगना बोलै रे हमरी अटरिया हो रामा ।
कागा बोलै कोइली बोलै
अरे बोलेला झिंगरजवा हो रामा ।
का तू कागा बोलिया बोले
अरे बलमा परदेसवा हो रामा ।

(21)

काहे फिरत बौरानी हो रामा
सखि नैहर में ।
आइ गये तोरे गौने क दिनवाँ
बहुत रहत अलसानी हो रामा ।
खेलत खात बरस बहु बीते
सो सब ह्वैहै कहानी हो रामा ।

(22)

सब बन अमवां बौरान लागे
महुआ चुअन लागे ।
छोटा छोटा लगलन टिकोरवा हो रामा ।
बरहे बरस पर सैंया मोर अइलें
हँसि हँसि गरवा लगइलें हो रामा ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

(23)

नाहीं भूले रे तुमरी सुरतिया हो रामा
जब से प्रीत लगी है तुमसे
सूनी लागे रे हमरी नगरिया हो रामा

(जानकीबाई इलाहाबादी—H. M. V., P. 1081)

(24)

जुई का फुलवा हथवा लागत
कुम्हलाय गैली रामा
सिर पर लुढ़ डलैया भर लुढ़यलू
आय गइ लो माली रखवलवा हो रामा।

(घाटो : जानकीबाई इलाहाबादी—H. M. V., P. 1292)

(25)

सब रस चुअऽलऽ नैनवा हो रामा
पिया नाहीं घर आये।
चार सखी मिलिके पिया को बुलाय लावऽ
करके कोई बहनवां।

(26)

हाँ हाँ कि नैन भर के देख न पड़ली
मैं हो रामा।
अरे सँझही से तू उठल क्यों धाये
अरे केतनो कि धाये हो।

(जोहरा जान—H. M. V., 8281)

(27)

अरे हाँ कि चलौ सखियाँ रे
मलिया की बगिया हो रामा।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

फुलवा मैं लोढ़ी रे लोढ़ी
अरे भरलू चंगेरिया हो रामा।
पिया भी गइले हो
मलिया जलभरवा हो रामा।
अरे मलिया की बगिया हो रामा॥

(जोहरा जान—H. M. V. 8281)

(28)

मोवन निंदिया जगाई हो रामा
भोरे रे भोरे।
जब हम रहली बारी रे भोली
तब सैंया मांगेल गवनवां हो रामा
भोरे रे भोरे॥

(जानकीबाई इलाहाबादी—चैताभैरव : H. M. V., 1820)

(29)

नाजुक बलमा रे रतिया नहिं आवे हो रामा
एक तो मोरी चढ़ली जवानी॥
दूजे बिरहा सतावे हो रामा।
चैनवा की गरमी निंदिया न आवे हो रामा।
'देवीदास' जिया ना मानै
केतनों समुझाये हो रामा॥

साहित्यिक चैतियां

(30)

मोसे सेजिया चढ़लि नहि जाई हो रामा॥
पिया बिनु साँपिन सी डसै बिरह रैन।
छिन छिन बढ़ल बिथा तन सजनी।
कटत न कठिन वियोगक रजनी।
बिनु हरि अति अकुलाई हो रामा॥

—भारतेन्दु हरिश्चन्द्र

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

(31)

फूलन लागे नवल गुलववा,
भौंरा रे वौरान्यो लखि वौर ।
लुभयो उतहिं फिरत मडरान्यो,
जात कहुँ नहिं और ॥

—भारतेन्दु हरिश्चन्द्र

(32)

चम्पा गाछी भँवरा लोभइलै हो रामा ।
बन बन फूलल फूल बिरछवन,
कलियै कै प्रीत भुलइलै हो रामा ॥

—पं० अम्बिकादत्त व्यास

(33)

सूतल भयल भिनसरवा
चलऽ सखि मलिया के बगिया हो रामा ।
आय गैल मलिया रखवरवा हो रामा ॥
नैन झरत हम देखहू न पउली ।
सूतल भयलै भिनसरवा हो रामा ॥

—पं० अम्बिकादत्त व्यास

(34)

जोवन देत झकझोरवा रामा
होला भिनुसरवा हो रामा, ए पिया जाग ऽ
कोइल करत बन सोरवा हो रामा, ए पिया जाग ऽ
मदन मरोर जोर तन डारत, जोवन.........
सूतल पिया के हम कइसे जगाई
जाग पड़ी संसरवा हो रामा
ए पिया जाग ऽ ।

—पं० किशोरीलाल गोस्वामी

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

(35)

जोबन नाहक मोर जाई हो रामा
सैंया रे ननदवां हो रामा
चइत कइसे बितइवै,
अरे मुखहू से हमसे न बोलैं
गरवा न लेई हैं लगाई हो रामा
चैत कइसे बितइवैं ।
अरे अइसे बालम के संगवा
जोबन नाहक मोर जाई हो रामा
चइत कइसे बितइवैं ।

—पं० किशोरीलाल गोस्वामी

(36)

काहे अइसन हरजाई हो रामा
तोरे जुलुमी नयना तरसाई हो रामा ।
सास ननद मोका ताना देत हइँ
छोटा देवरा हँसि के बोलाई हो रामा ।
मोरा सैंया मोरो बात न पूछैं
तड़पि तड़पि सारी रैन गँवाई हो रामा ।
नाजुक चुनरी रंग में बोरो
बाला जोबनवा कइसे छुपाई हो रामा ।
'शाद' पिया को ढूँढ़न निकसी
गलियन गलियन खाक उड़ाई हो रामा ।

—सैयद अलीमुहम्मद 'शाद'

(37)

सपना देखीला बलखनवाँ हो रामा
कि सइयाँ के अवनवाँ ।
पहिल ओहिल सइयाँ अइले अँगनवाँ
हम ले जाई जलपनवा हो रामा
कि सइयाँ के अवनवाँ ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

बोलत बतियावत कछुक घरी बीते
खात खियावत पनवाँ हो रामा
कि सइयाँ के अवनवाँ।
पुरुबी साड़ी जरद किनारी
अवरू ले अइले कँगनवा हो रामा
कि सइयाँ के अवनवाँ।
'सुरुज' चाहेले गरवा लगावल
कि खुलि गइले पलक पपनवाँ हो रामा
कि सइयाँ के अवनवाँ।

—सुरुज लाल

(38)

चाँदनी चितवा चुरावे हो रामा
चैत के रतिया।
मधु ऋतु मधुर मधुर रस घोले
मधुर पवन अलसावे हो रामा
चैत के रतिया।
गम-गम गमकत बारी फुलवरिया
भँवरा गुन गुन गावे हो रामा
चैत के रतिया।
अमवा महुइया मधुर रस टपके
मंजरि झुकि झुकि आवे हो रामा
चैत के रतिया।
हरसत बिहँसत उगल अँजोरिया
कोयल कुहुक सुनावे हो रामा
चैत के रतिया।

—श्रीमती विन्ध्यवासिनी देवी

(39)

सैंया मोरा रे कुसुमी बोअइह हो रामा।
चम्पा लगइह चमेली लगइह

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

CC Gangoli 4-3-1982

खेतवनि कुसुम बोअइह हो रामा।
ओही रे कुसुमिया में चुनरी रंगइह
आरी आरी गोटवा टँकइह हो रामा।
जब हम जायेव नैहरवा हो
गुनि गुनि सुदिन पठइह हो रामा।
हजमा पठइह बभना पठइह
आप चुनर लेके अइह हो रामा।

—श्रीमती विन्ध्यवासिनी देवी के सौजन्य से प्राप्त

(40)

चैत के रतिया अकसवा में चढ़ले
धीमे-धीमे चाँदी के चन्दा हो रामा।
गछिया के डारी से बीचे-बीचे झाँके
धीमे-धीमे गोरकी चन्दनिया हो रामा।
जमुना किनारे नागिन अस डोले
धीमे धीमे जल की लहरिया हो रामा।
सूतल कलीयन के चुपके जगाये
धीमे धीमे सीतल पवनिया हो रामा।
सुध बुध हेरइलीं सुनलीं जे पियवा के
धीमे-धीमे मीठी मुरलिया हो रामा।

—डॉ० शान्ति जैन

अंगिका चैती

(41)

(भाव : प्रस्तुत गीत में वसन्त ऋतु में एक विरहिणी के उद्‌गार वर्णित हुए हैं।)

एङ्नाँ फुलैलै फुलगेनवा हो रामा, पिया नहिं ऐलै।
मँजरलऽ बगिया में कोयलिया बोलै
चुवी चुवी महुआ मदन रस घोलै
मधुबन में कुसुम फुलैलै हो रामा, भँमरा लोभैलै।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

सास ननद दैया दुखवो नै मानै
देवरा अबोध आभीं कुछुवो नै जानै
पियाजी रऽ पथल करेजवा हो रामा, सुधियो भुलैलै ।
केना कँ लिखैवै राम केकरा में पतिया
केना कँ कहवै सभे मनऽ केरऽ बतिया
पिंजड़ा में तड़पै परनमा हो रामा, पाँख ओझरैलै ।
भली छेलें तखनीयें रहलें कुमारी
फुदकली चलै छेलें बाबा रऽ दुलारी
खेलै छेलें सुपती मउनिया हो रामा, सपना हेरैलै ।

—पं० परमानन्द पाण्डे

वज्जिका चैती

(42)

(भाव : चैत का महीना । सब कुछ अनुराग के लाल रंग में रंगा हुआ है ।)

चइत माह परम सोहाओन हो रामा
चइत माहे ।
महुआ फुलाएल आम महुआएल
धरती जे लगइ लोभाओन हो रामा
चइत माहे ।
लाल लाल टेस पलास बन झलकइ
लाल लाल पतिओं में टिकोलो जे झमकइ
चुनरी लगइ मनभाओन हो रामा,
चइत माहे ।
फूल ओरहुल लाल, लाले कनइलो
सीमर लाल गुलमोहर फइलो
देवी के लाले ओढ़ाओन हो रामा
चइत माहे ।
लाले लाल लाली सोभइ मुंह ललना
मुंह के जे लाली रहइ घर बनमा
राजा बसंत हरसाओन हो रामा
चइत माहे ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

सेनुर घोरल सरेंग (आकाश) के मँगिआ
भोर साँझ जेना लागे एक रंगिआ
सरेंग पताल ललाओन हो रामा
चइत माहे ।
मन के परेम रस लाल रंग घोरल
आँखे आँखे रूपो रस में बोरल
जेने देखी तेने लगइ ललाओन हो रामा
चइत माहे ।
लाली देखे लगली हम बन फुलवरियों में
घर-बन खेत-खात आरो बँसबरिओ में
लगइ जेना हमरो रंग बदलाओन हो रामा
चइत माहे ।

—डॉ० अजितनारायण सिंह तोमर

निर्गुण चैतियाँ

(43)

भावे नाहीं मोहि भवनवाँ
हो रामा, बिदेस गवनवाँ ।
जो एह मास निरास मिलन भैले
सुन्दर प्रान गवनवाँ हो रामा
केसोदास गावे निरगुनवाँ
ठाढ़ि गोरी करे गुनवनवाँ हो रामा ।

—केसोदास

(44)

कुबुधि कलवारिनि बसेले नगरिया हो रे
उन्हक मोर मनुआँ मतावल हो रे ।
भूलि गैलँ पिया पंथवा द्रस्टिया हो रे
अवघट परलीं भुलाए हो रे ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

भवजल नदिया भेआवन हो रे
कवने के विधि उतरब पार हो रे।
दरिया साहब गुन गावल हो रे
सतगुर सब्द सजीवन पावल हो रे ।

—दरिया साहब

(45)

पिया से मिलन हम जाएब हो रामा।
अतलस लँहगा कुसुम रंग सारी
पहिर पहिर गुन गाएब हो रामा ।
बाजू बन्द अनन्त पहिरके
नाम के नथ झमकाएब हो रामा।
ज्ञान ध्यान के घुंघरू बाँधे
सबदन माँग भराएब हो रामा।
कहत कबीर सुनो भाई साधो
बहुरि न यहि जग आएब हो रामा।

—कबीरदास

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

खण्ड–3

चैती :
स्वरलिपियों में

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

स्वरलिपि के गीतों का अनुक्रम

1. रामा राजा जनक जी कठिन प्रन ठाने
2. चैत मासे चुनरी रंगा दे हो बालम
3. पाकल पाकल पनमा के
4. चढ़ले चइतवा जीव मोर चंचल
5. हमरे अंगनवा चइत रे मासे
6. कुसुमी लोढ़न हम जाएव
7. सुगना बोले रे हमरी अटरिया
8. चैत की निंदिया रे जियरा अलसाने
9. मानिक हमरो हिरैले
10. राम घरे अइहें पहुनमा
11. अरे अहो रामा कहमा के कुम्हरा
12. कौन मासे अमवा मंजरइले

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

एक

ताल : कहरवा–आठ मात्रा–दुगुन लय (द्रुत)

रामा राजा जनक जी कठिन प्रन ठाने हो रामा
देसे देसे लिखि लिखि पतिया पठावे हो रामा
देसे देसे ।

देस रे विदेसवा के भूप सभ अइले हो रामा
केहू नाहीं संकर चाप चढ़ावे हो रामा, केहू नाहीं ।

अजोधा नगरिया बसेले राजा दशरथ हो रामा
उनहूँ के, राज कुँवर दोऊ भइया हो रामा, उनहूँ के ।

एक हाथे रामचन्द्र धेनुहा उठावे हो रामा
दूजे हाथे कीट मुकुट सरिहावे हो रामा, दूजे हाथे ।

स्वरलिपि :

1 2 3 4	5 6 7 8	1 2 3 4	5 6 7 8
		× × × ×	× × प ग
		× × × ×	× × रा मा
प — ध सां	सां सां सां सां	सां सां सां सां	सां — रें सां
रा ऽ जा ज	न क जी क	ठि न प्र न	ठा ऽ ने हो
नी — ध ध	सां — नी —	ध — प —	— — प प
रा ऽ ऽ म	दे ऽ से ऽ	दे ऽ से ऽ	ऽ ऽ रा मा
प ध ध ध	ध प ध प	म — म ग	सा — रे ग —
लि खि लि खि	प ति या प	ठा ऽ वे हो	रा ऽ मा ऽ

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

सा — (ग)रे सा	सा — सा —	प ध ध ध	ध प ध प
ऽ ऽ दे से	दे ऽ से ऽ	लि खि लि खि	प ति या प
म — म ग	सा — (रे)ग —	सा — (ग)रे सा	सा — सा —
ठा ऽ वे हो	रा ऽ मा ऽ	ऽ ऽ दे से	दे ऽ से ऽ
प प ध सां	सां सां सां सां	सां सां सां सां	सां — रें सां
दे स रे बि	दे स वा के	भू प स भ	अ इ ले हो
नी — ध ध	सां — नी —	ध — प —	— — प प
रा ऽ ऽ म	के ऽ हू ऽ	ना ऽ हीं ऽ	ऽ ऽ रा मा
प ध ध ध	ध प ध प	म — म ग	सा — (रे)ग —
सं ऽ क र	चा ऽ प च	ढ़ा ऽ वे हो	रा ऽ मा ऽ
सा — (ग)रे सा	सा — सा —	प ध ध ध	ध प ध प
ऽ ऽ के हू	ना ऽ हीं ऽ	सं ऽ क र	चा ऽ प च
म — म ग	सा — (रे)ग —	सा — (ग)रे सा	सा — सा —
ढ़ा ऽ वे हो	रा ऽ मा ऽ	ऽ ऽ के हू	ना ऽ हीं ऽ

टिप्पणी : आगे की पंक्तियाँ भी इसी प्रकार गाई जाएँगी ।

दो

ताल : रूपक—7 मात्रा; बीच में कहरवा–8 मात्रा

(द्रुत)

चैत मासे चुनरी रंगा दे हो बालम
झमकि झूमि चलवो ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

चुनरी रंगा दे अंगिया सिया दे
कोरे कोरे गोटवा लगा दे हो बालम
झमकि झूमि चलवो ।

कंगना गढ़ा दे, झुमकी पेन्हा दे
सोनवा के मुनरी मंगा दे हो वालम
झमकि झूमि चलवो ।

लट सुलझा दे, गजरा सजा दे
मोतियन मंगिया भरा दे हो वालम
झमकि झूमि चलवो ।

कजरा लगा तूं बिंदिया सजा दे
मोरे कर मेंहदी सजा दे हो वालम
झमकि झूमि चलवो ।

स्वरलिपि :

1 2 3	4 5	6 7	1 2 3	4 5	6 7
स्थायी :					
ग ग —	ग —	ग —	ग रे —	ग —	म —
चै त ऽ	मा ऽ	से ऽ	चु न ऽ	री ऽ	रं ऽ
		सा			
ग — रे	सा रे	ऩी —	ध़ ऩी ध़	रे रे	रे रे
गा ऽ ऽ	दे ऽ	हो ऽ	वा ऽ ऽ	ल म	ऽ झ
ऩी सा —	रे —	ग —	सा सा —	ऩी ध़	ऩी प़
म कि ऽ	झू ऽ	मि ऽ	च ल ऽ	वो ऽ	ऽ ऽ
प़ ध़ —	सा —	सा —	ग रे —	ग —	म —
चै त ऽ	मा ऽ	से ऽ	चु न ऽ	री ऽ	रं ऽ
ग — रे	सा —	सा —			
गा ऽ ऽ	दे ऽ	ऽ ऽ			

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

1 2 3 4 5 6 7 8 1 2 3 4 5 6 7 8

अन्तरा :

सा सा — ग — म ग
चु न ऽ री ऽ रं ऽ

प — प प — प — म म — म — म प
गा ऽ ऽ दे ऽ ऽ ऽ अं गि ऽ या ऽ सि ऽ
ग — प म — ग —
या ऽ ऽ दे ऽ ऽ ऽ

अन्तरे की दूसरी पंक्ति कहरवा ताल (द्रुत) में :

1 2 3 4 5 6 7 8 1 2 3 4 5 6 7 8

ग ग ग ग ग रे ग म ग –रे सा नी धनी –ध रे रे

को रे को रे गो ट वा ल गा ऽऽ दे हो बाऽ ऽऽ लम झ

नी सा — रेग सा — नीध नीप — प धसासा ग रे –ग –म

म कि ऽ झूमि च ल बोऽ ऽऽ ऽ चै ऽत मासे चु न ऽरी ऽरं

ग — रे सा — सा —
गा ऽ ऽ दे ऽ ऽ ऽ

तीन

ताल : कहरवा (द्रुत)–आठ मात्रा–दून लय

पाकल पाकल पनमा के खिलिया लगवलीं अहो रामा
ओही पनमा पिया के खिलवलीं अहो रामा।
पनमा खिलाई हम मिसिया लगवलीं अहो रामा
ओही रंग चुनरी रंगवलीं अहो रामा।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

चुनरी पहिरि हम चललीं बजरिया अहो रामा
चुनरी निरखे गोलदरवा अहो रामा ।

स्वरलिपि :

1	2	3	4	5	6	7	8	1	2	3	4	5	6	7	8
		सा	रे	म	—	म	म	प	—	प	—	प	—	ध	—
		पा	कल	पा	ऽ	क	ल	प	ऽ	न	ऽ	मा	ऽ	के	ऽ
×	×	प	प	ध	—	प	म	म	—	म	ग	रे	—	सा	—
ऽ	ऽ	खि	लि	या	ऽ	ल	ऽ	ग	ऽ	व	ऽ	लीं	ऽ	अ	ऽ
रे	ग	रे	—	सा	—	सा	—	×	×	रे	म	म	म	म	—
हो	ऽ	ऽ	ऽ	रा	ऽ	मा	ऽ	ऽ	ऽ	ओ	ही	प	न	मा	ऽ
प	म	म	ग	ग	रे	रे	ग	(रे)सा	—	सा	—	सा	—	सा	—
पि	ऽ	या	ऽ	के	ऽ	खि	ऽ	ल	ऽ	व	ऽ	लीं	ऽ	अ	ऽ
रे	ग	रे	—	सा	—	सा	—	×	×	सा	रे	म	—	म	म
हो	ऽ	ऽ	ऽ	रा	ऽ	मा	ऽ	ऽ	ऽ	प	न	मा	ऽ	खि	ऽ
प	—	प	—	प	—	ध	—	×	×	प	प	ध	—	प	म
ला	ऽ	ई	ऽ	ह	ऽ	म	ऽ	ऽ	ऽ	मि	सि	या	ऽ	ल	ऽ
म	—	म	ग	रे	—	सा	—	रे	ग	रे	—	सा	—	सा	—
ग	ऽ	व	ऽ	लीं	ऽ	अ	ऽ	हो	ऽ	ऽ	ऽ	रा	ऽ	मा	ऽ
×	×	रे	म	म	म	म	—	प	म	म	ग	ग	रे	रे	ग
ऽ	ऽ	ओ	ही	रं	ऽ	ग	ऽ	चु	ऽ	न	ऽ	री	ऽ	रं	ऽ
(रे)सा	—	सा	—	सा	—	सा	—	रे	ग	रे	—	सा	—	सा	—
ग	ऽ	व	ऽ	लीं	ऽ	अ	ऽ	हो	ऽ	ऽ	ऽ	रा	ऽ	मा	ऽ

टिप्पणी : आगे भी यही धुन गाई जाएगी ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

चार

ताल : कहरवा—आठ मात्रा—दून लय

चढ़ले चइतवा जीव मोरे चंचल हो रामा
घरे-घरे वाजेला आनन वधइया हो रामा
घरे-घरे वाजेला ।

मोरा पिछुअरवा ठूंठि पकड़िया हो रामा
ताहि चढ़ि जोगी वंसिया बजावे हो रामा
ताहि चढ़ि जोगी ।

ताहि तर सूलेला ननदी के भइया हो रामा
ताहि तरे वाजेला आनन्द वधइया हो रामा
ताहि तरे वाजेला ।

स्वरलिपि :

1 2 3 4	5 6 7 8	1 2 3 4	5 6 7 8
ध — ध —	ध — ध प	ध॑ ध॑ ध —	ध ध प म
च ऽ ढ़ ऽ	ले ऽ ऽ च	इ त वा ऽ	जी व मो रे
प — म म	ध — ध —	प — म म	ग रे — सा
चं ऽ च ल	हो ऽ हो ऽ	चं ऽ च ल	हो रा ऽ मा
ग — रे सा	सा — प़ प़	ध़ सा सा सा	सा रे म म
घ ऽ रे ऽ	घ ऽ ऽ रे	बा ऽ जे ला	आ नं द व
ध — प म	ग रे — सा	ग — रे सा	सा — प़ प़
ध इ या ऽ	हो रा ऽ मा	घ ऽ रे ऽ	घ ऽ ऽ रे
ध़ सा सा सा	× × × ×		
बा ऽ जे ला	ऽ ऽ ऽ ऽ		

टिप्पणी : शेष पंक्तियां इसी प्रकार गाई जायेंगी ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

पांच

ताल : रूपक—सात मात्रा

हमरे अँगनवा चइत रे मासे
चैंत मासे फूलेला गुलबवा हो रामा।
वेला फूले चमेली फूले
जुहिया फूलेला आधी रतिया हो रामा।
अमवा की डाली पे लागल मोजरिया
कुहू कुहू बोलेले कोयलिया हो रामा।

स्वरलिपि :

1	2	3	4	5	6	7	1	2	3	4	5	6	7

स्थायी :

रे	म॑	—	प	—	ध	—	म	म	—	म	ग	रे	—
ह	म	ऽ	रे	ऽ	अं	ऽ	ग	न	ऽ	वा	ऽ	ऽ	ऽ
रे	म	—	ग	—	रे	—	सा	—	नी़	ध़	नी़	प़	—
चै	ऽ	ऽ	त	ऽ	रें	ऽ	मा	ऽ	ऽ	से	ऽ	ऽ	ऽ
प़	ध़	—	सा	—	सा	—	रे	रे	—	ग	—	म	—
चैं	त	ऽ	मा	ऽ	से	ऽ	फू	ले	ऽ	ला	ऽ	गु	ऽ
ग	ग	रे	सा	—	नी़	सा	ध़	नी़	ध़	रे	—	रे	—
ल	ब	ऽ	वा	ऽ	हो	ऽ	रा	ऽ	ऽ	मा	ऽ	ऽ	ऽ
सा	सा	—	रे	—	ग	—	सा	—	—	सा	—	सा	—
चै	ऽ.	ऽ	त	ऽ	रे	ऽ	मा	ऽ	ऽ	से	ऽ	ऽ	ऽ

अन्तरा :

सा	सा	—	ग	—	म	ग	प	—	—	प	—	प	प
वे	ऽ	ऽ	ला	ऽ	ऽ	ऽ	फू	ऽ	ऽ	ले	ऽ	ऽ	च
ग	ग	—	प	—	ध	—	पधनी	ध		प	—	ग	—

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

मे ऽ ऽ	ली ऽ	ऽ ऽ	फूऽ ऽ ऽ	ले ऽ	ऽ	ऽ
ग ग —	ग —	ग —	ग रे —	ग —	म	—
जु हि ऽ	या ऽ	फू ऽ	ले ला ऽ	आ ऽ	धी	ऽ
म ग —	सा —	ऩी सा	ध़ ऩी ध़	रे —	रे	—
र ति ऽ	या ऽ	हो ऽ	रा ऽ ऽ	मा ऽ	ऽ	ऽ
सा सा —	रे —	ग —	सा सा —	सा —	सा	—
चै ऽ ऽ	त ऽ	रे ऽ	मा ऽ ऽ	से ऽ	ऽ	ऽ
रे मॆ —	प —	ध —	म म —	म ग	रे	—
ह म ऽ	रे ऽ	अं ऽ	ग न ऽ	वा ऽ	ऽ	ऽ
रे म —	ग —	रे —	सा — ऩी	ध़ ऩी	प़	—
चै ऽ ऽ	त ऽ	रे ऽ	मा ऽ ऽ	से ऽ	ऽ	ऽ
प़ ध़ —	सा —	सा —	रे रे —	ग —	म	म
चै त ऽ	मा ऽ	से ऽ	फू ले ऽ	ला ऽ	ऽ	गु
ग ग रे	सा —	ऩी सा	ध़ ऩी ध़	रे —	रे	—
ल ब ऽ	वा ऽ	हो ऽ	रा ऽ ऽ	मा ऽ	ऽ	ऽ
सा सा —	रे —	ग —	सा सा —	सा —	सा	—
चै ऽ ऽ	त ऽ	रे ऽ	मा ऽ ऽ	से ऽ	ऽ	ऽ

छह

ताल : जत—चौदह मात्रा

कुसुमी लोढ़न हम जाएब हो रामा।

हमरी चुनरिया पिया के पगरिया
एक ही रंग रंगाएब हो रामा ।

बारह बरिस पर पिया मोरा अइलन
हँसि हँसि गरवा लगाएब हो रामा ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

स्वरलिपि :

1	2	3	4	5	6	7	8	9	10	11	12	13	14
स्थायी :													
सा	सा	—	ग	—	म	—	प	प	—	प	—	प	—
कु	सु	ऽ	मी	ऽ	लो	ऽ	ढ़	न	ऽ	ह	ऽ	म	ऽ
ग	ग	—	ग	म	ध̲	प	ग̲	—	रे	सा	—	ग̲	रे
जा	ऽ	ऽ	ए	ऽ	ऽ	ब	हो	ऽ	ऽ	रा	ऽ	मा	ऽ
सा	ऩी	—	ऩी	सा	ग	म	प	प	—	ध̲	—	प	—
ऽ	ऽ	ऽ	कु	सु	मी	लो	ढ़	न	ऽ	ह	ऽ	म	ऽ
ग	—	—	ग	म	प	प	ग̲	—	रे	सा	—	सा	—
जा	ऽ	ऽ	ए	ऽ	ऽ	ब	हो	ऽ	ऽ	रा	ऽ	मा	ऽ
अन्तरा :													
प	प	—	ग	—	म	—	प	प	—	प	—	प	—
ह	म	ऽ	री	ऽ	चु	ऽ	न	रि	ऽ	या	ऽ	ऽ	ऽ
प	ध	प	ध	नी̲	नी̲	—	ध	ध	—	प	—	प	—
पि	या	ऽ	की	ऽ	प	ऽ	ग	रि	ऽ	या	ऽ	ऽ	ऽ
नी	नी	—	नी	—	नी	सां	नी	सां	नी̲	ध	—	प	—
ए	ऽ	ऽ	क	ऽ	हि	ऽ	रं	ऽ	ऽ	ग	ऽ	रं	ऽ
ग	—	—	ग	म	प	प	ग̲	—	रे	सा	—	ग̲	रे
गा	ऽ	ऽ	ए	ऽ	ऽ	ब	हो	ऽ	ऽ	रा	ऽ	मा	ऽ
सा	ऩी	—	ऩी	सा	ग	म	प	प	—	ध̲	—	प	—
ऽ	ऽ	ऽ	कु	सु	मी	लो	ढ़	न	ऽ	ह	ऽ	म	ऽ
ग	—	—	ग	म	ध̲	प	ग̲	—	रे	सा	—	सा	—

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

जा ऽ ऽ ए ऽ ऽ व हो ऽ ऽ रा ऽ मा ऽ

टिप्पणी : शेष अन्तरे इसी प्रकार होंगे।

सात

ताल : कहरवा–आठ मात्रा–आड़ी लय

सुगना बोले रे हमरी अटरिया हो रामा।
छाये छवीले रे बिदेसवा
रहि रहि मारे रे विरही कटरिया हो रामा।

स्वरलिपि :

1	2	3	4	5	6	7	8	1	2	3	4	5	6	7	8
स्थायी :															
						गग	म	गरे	–ग	–म	–गरे	सा	–ऩीसा	ग	ग
						सुग	ना	ऽऽ	ऽबो	ऽले	ऽऽऽ	रे	ऽऽऽ	ह	म
गरे	ग	सारे	गम	ग	ऩीसासा	साग	रेम	ग	—	ग	—	×	×		
रीऽ	ऽ	अऽ	ऽऽ	ऽ	ऽट	रिया	ऽहो	रा	ऽ	मा	ऽ	×	×		
अन्तरा :															
														रेरे	मम
														छाऽ	येछ
प	—	प	—	×	प	—	प	पग	प	म	गरे	×	×	गग	मम

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

वी ऽ ले ऽ × रे ऽ वि दे स वा ऽऽ × × रहि रहि

नी
गरे–ग–म–गरे सा–नीसा ग ग गरे ग सारे गम ग सासा साग रेम

ऽऽ ऽमा ऽरे ऽऽऽ रे ऽऽऽ वि र हीऽ ऽ कऽ ऽऽ ऽ ऽट रिया ऽहो

ग — ग —
रा ऽ मा ऽ

टिप्पणी : चैती की इस मूल धुन को शास्त्रीय गायक ठुमरी शैली में तरह-तरह की बोल-तान लेकर स्वतंत्रतापूर्वक इच्छानुसार लय में गाते हैं।

आठ

ताल : कहरवा—आठ मात्रा—आड़ी लय

चैत की निंदिया रे
जियरा अलसाने हो रामा।
सँझहि से सूतल पियवा भइल भोर हो
उअली किरलियाँ हो रामा।

स्वरलिपि :

1 2 3 4 5 6 7 8 1 2 3 4 5 6 7 8

स्थायी :

गग म गरे–ग–म–गरे सा–नीसा ग ग

चै तकी ऽऽ ऽनि दियाऽऽऽ रे ऽऽऽ जि य

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

नी
गरे ग सारे गम ग सासा साग रेम ग — ग — × ×

राऽ ऽ अऽ लऽ ऽ ऽसा ऽने ऽहो रा ऽ मा ऽ × ×

अन्तरा :

रेरे मम

संझ हीसे

प
प पप प प × प प प ग प म गरे × × ग ग

सू तल पि या × भ इ ल भो ऽ र होऽ × × उ अ

नी
गरे ग सारे गम ग सासा साग –रेम ग — ग — × ×

लीऽ ऽ किऽ ऽऽ ऽ ऽर निया ऽहो रा ऽ मा ऽ × ×

टिप्पणी : इस धुन को भी शास्त्रीय गायक ठुमरी शैली में इच्छानुसार लय के साथ सुन्दर-सुन्दर बोल-तान बनाकर गाते हैं।

नौ

ताल : जत—चौदह मात्रा

मानिक हमरो हिरँले हो रामा जमुना में
केहू नाहीं खोजेला पदारथ हो रामा
जमुना में।

ओही रे जमुनवा के चिकटि मटिया
चलत में पाँव बिछिलइले हो रामा जमुना में।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

ओही रे जमुनवा के करिया पनिया
देखत में मन घबरइले हो रामा, जमुना में ।

तोरा लेखे ग्वालिन मानिक हिरैले
मोरा लेखे चान छपितवा हो रामा, जमुना में ।

दास बुलाकी चइत घाँटो गावे
गाई गाई बिरहिन समुझावे हो रामा ।

स्वरलिपि :

प्रस्तुत स्वरलिपि डॉ० कृष्णदेव उपाध्याय द्वारा लिखित पुस्तक 'लोक साहित्य की भूमिका' से ली गई है ।

1	2	3	4	5	6	7	8	9	10	11	12	13	14
स्थायी :													
रे	—	—	म	—	म	—	प	ध	—	ध	—	ध	—
मा	ऽ	ऽ	नि	ऽ	क	ऽ	हृ	म	ऽ	रो	ऽ	हि	ऽ
ध	—	नी	पध	नीध	पम	म	म	—	—	मप	ध	—	म
रै	ऽ	ऽ	लेऽ	ऽऽ	ऽऽ	हो	रा	ऽ	ऽ	माऽ	ऽ	ऽ	ऽ
प	ध	—	धप	—	म	—	पम	गरे	—	—	—	—	—
ज	मु	ऽ	ना	ऽ	ऽ	ऽ	मेंऽ	ऽऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ
ध	ध	—	ध	—	ध	—	ध	प	—	ध	—	—	नी
के	हू	ऽ	ना	ऽ	हीं	ऽ	खो	जे	ऽ	ला	ऽ	ऽ	प
पध	नीध	—	प	म	—	म	म	—	—	मप	ध	—	पम
दाऽ	ऽऽ	ऽ	र	थ	ऽ	हो	रा	ऽ	ऽ	माऽ	ऽ	ऽ	ऽ

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

प ध —	^धप म — —	पम गरे —	— — — —
ज मु ऽ	ना ऽ ऽ ऽ	मेंऽ ऽऽ ऽ	ऽ ऽ ऽ ऽ

अन्तरा :

प ध —	सां — सां —	सां सां —	सां — सांनी ध
ओ ही ऽ	रे ऽ ज ऽ	मु न ऽ	वा ऽ केऽ ऽ
प ध —	सां — रें —	रें सां —	सां — सांनी धप
चि क ऽ	टि ऽ ऽ ऽ	म टि ऽ	या ऽ ऽऽ ऽऽ
ध ध —	ध — ध —	ध प —	ध — नी —
च ल ऽ	त ऽ में ऽ	पाँ व ऽ	वि ऽ छि ऽ
पध नीध —	म — — म	म — —	मप ध — ^पम
लैऽ ऽऽ ऽ	ले ऽ ऽ हो	रा ऽ ऽ	माऽ ऽ ऽ ऽ
प ध —	प — म —	पम गरे —	— — — —
ज मु ऽ	ना ऽ ऽ ऽ	मेंऽ ऽऽ ऽ	ऽ ऽ ऽ ऽ

टिप्पणी : पूरा गीत इसी प्रकार गाया जायेगा ।

दस

ताल : कहरवा–आठ मात्रा–द्रुत लय

राम घरे अइहें पहुनमा मोरे रामा हो
रात शबरी देखलन सपनमा हो रामा ।
निहुरि निहुरि शबरी अंगना बहारे
गोबर से निपलन अंगनमा मोरे रामा हो।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

पकल पकल बैर तोरी बनमा से लयलन
कुश के विछ्यलन असनमा मोरे रामा हो ।

आज मुदित मन ही मन शबरी
आज अइलन दशरथ ललनमा मोरे रामा हो ।

स्वरलिपि :

1	2	3	4	5	6	7	8	1	2	3	4	5	6	7	8

स्थायी :

×	×	प	—	प	प	—	प	प	ध	प	ध	म	—	—	म
×	×	रा	ऽ	म	घ	ऽ	रे	अ	ऽ	इ	ऽ	हें	ऽ	ऽ	प
			प			रे									
म	प	प	म	—	ग	—	सा	रे	—	म	—	प	ध	प	ध
हु	न	मा	ऽ	ऽ	मो	ऽ	रे	रा	ऽ	ऽ	ऽ	मा	ऽ	ऽ	ऽ
म	—	ग	—	म	ध	—	प	ग	—	ग	रे	सा	सा	सा	—
ऽ	ऽ	रा	ऽ	त	श	ब	री	दे	ऽ	ख	ऽ	ल	न	स	ऽ
सा	—	ग	—	ग	ग	—	ग	ग	रे	सा	रे	सा	—	—	—
ऽ	ऽ	प	ऽ	न	वा	ऽ	हो	रा	ऽ	ऽ	ऽ	मा	ऽ	ऽ	ऽ

अन्तरा :

—	—	ग	ग	—	ग	—	ग	सा	रे	ग	—	सा	—	सा	—
ऽ	ऽ	नि	हु	ऽ	री	ऽ	नि	हु	ऽ	री	ऽ	श	व	री	ऽ
रे	म	म	म	—	म	—	ग	रे	ग	रे	ग	सा	—	सा	—
ऽ	ऽ	अं	ग	ऽ	ना	ऽ	बु	हा	ऽ	ऽ	ऽ	रे	ऽ	ऽ	ऽ
×	×	प	—	प	प	प	—	प	ध	प	ध	म	म	—	म
×	×	गो	ऽ	ब	र	से	ऽ	नि	ऽ	प	ऽ	ल	न	ऽ	अं

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

		प					रे								
म	प	प	म	—	ग	—	सा	रे	—	म	—	प	ध	प	ध
ग	न	मा	ऽ	ऽ	मो	ऽ	रे	रा	ऽ	ऽ	ऽ	मा	ऽ	ऽ	ऽ
म	—	ग	—	म	ध	ध	प	ग	—	ग	रे	सा	सा	सा	—
ऽ	ऽ	रा	ऽ	त	श	व्र	री	दे	ऽ	ख	ऽ	ल	न	स	ऽ
सा	—	ग	—	ग	ग	—	ग	ग	रे	सा	रे	सा	—	—	—
ऽ	ऽ	प	ऽ	न	वा	ऽ	हो	रा	ऽ	ऽ	ऽ	मा	ऽ	ऽ	ऽ

टिप्पणी : शेष पंक्तियां भी इसी प्रकार गायी जायेंगी ।

ग्यारह

ताल : कहरवा आठ मात्रा—मध्य लय; बीच में -- रूपक ताल—सात मात्रा

अरे अहो रामा कहमा के कुम्हरा
रचले घयलिया हो रामा
कहमा के सुन्दर पनिहारिन हो राम ।
अरे अहो रामा मथुरा के कुम्हरा
रचले घयलिया हो रामा
गोकुला के सुन्दर पनिहारिन हो राम ।

स्वरलिपि :

1	2	3	4	5	6	7	8	1	2	3	4	5	6	7	8
						प	प	सां	—	सां	—	—	सां	—	सां
						अ	रे	अ	ऽ	हो	ऽ	ऽ	रा	ऽ	मा
सां	—	रें	सां	सां	नी	—	नी	प	—	प	ध	प	—	प	प
क	ऽ	ह	ऽ	ऽ	मा	ऽ	के	कु	ऽ	म्ह	ऽ	रा	ऽ	अ	रे

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

सां — सां —　— सां — सां　सां — रें सां　सां नी — नी
अ ऽ हो ऽ　ऽ रा ऽ मा　क ऽ ह ऽ　ऽ मा ऽ के
प — प ध　प — प प　नी — ध —　प — म म

कु ऽ म्ह ऽ　रा ऽ अ रे　र ऽ च ऽ　ले ऽ ऽ घ
प प प —　प प प ध　नी — ध —　प — म म

य लि या ऽ　अ हो रा मा　र ऽ च ऽ　ले ऽ घ ऽ
म — ग म　रे — सा सा　सा — सा —　— सा सा रे
ऽ ऽ य लि　ऽ ऽ हो ऽ　रा ऽ ऽ ऽ　ऽ म अ रे
ग — ग म　रे — रे ग　सा — सा —　सा — सा रे
क ऽ ह ऽ　मा ऽ के ऽ　सुं ऽ द र　ऽ ऽ अ रे
ग — ग मं　रे — रे ग　सा — सा सा　सां — — —
क ऽ ह ऽ　मा ऽ के ऽ　ऽ ऽ ऽ ऽ　हो ऽ ऽ ऽ
प प प ध　नी ध प म　— ग रे सा　सा — सा सारे
क ह मा के　सुं दर प नि　ऽ हा रिन हो　रा ऽ म अरे
ग — ग म　रे — रे ग　सा — सा सा　— — सा रे
क ऽ ह ऽ　मा ऽ के ऽ　सुं ऽ द र　ऽ ऽ अ रे
प प प ध　नी ध प म　— ग रे सा　सा — सा पध
क ह मा के　सुं दर प नि　ऽ हा रिन हो　रा ऽ म अरे

1 2 3　4 5　6 7　1 2 3　4 5　6 7

सां — सां　सां —　सां —　नी — ध　ध नी　नी —
अ ऽ हो　रा ऽ　मा ऽ　क ऽ ह　मा ऽ　के ऽ
प — प　प —　प ध　सां — सां　सां —　सां —
कु ऽ म्ह　रा ऽ　अ रे　अ ऽ हो　रा ऽ　मा ऽ
नी — ध　ध नी　नी —　प — प　प —　प ध
क ऽ ह　मा ऽ　के ऽ　कु ऽ म्ह　रा ऽ　अ रे
नी नी —　ध —　प म　प प प　प —　प ध

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

र च ऽ	ले ऽ	घ ऽ	यलि या ऽ	अ हो	रा मा
नी नी —	ध —	प प	म — —	ग —	रे —
र च ऽ	ले ऽ	घ ऽ	य लि ऽ	या ऽ	हो ऽ
सा — सा	सा —	सा रे	ग — म	ग —	रे ग
रा ऽ ऽ	ऽ म	अ रे	क ऽ ह्	मा ऽ	के ऽ
सा — सा	सा —	सा रे			
कु ऽ म्ह	रा ऽ	अ रे			

टिप्पणी : इसके वाद फिर आठ माता में आकर आगे की दो पंक्तियाँ भी क्रमशः दोनों तालों में स्वेच्छानुसार गाई जाएँगी।

बारह

घाटो चैतार—ताल : रूपक—सात मात्रा; बीच में कहरवा ताल—आठ मात्रा—द्रुत लय

कौने मासे अमवा मंजरइले हो रामा
कौने मासे लगले टिकोलवा हो रामा।
फागुन मासे अमवा मंजरइले हो रामा
चैत मासे लगले टिकोलवा हो रामा।

स्वरलिपि :

1 2 3	4 5	6 7	1 2 3	4 5	6 7
ग ग —	ग —	ग —	ग रे —	ग —	म —
कौ ने ऽ	मा ऽ	से ऽ	अम वा ऽ	मं ऽ	ज ऽ
ग ग रे	रे ग	ग रे	सा — ऩी	ध़ —	ध़ —
र इ ऽ	ले ऽ	हो ऽ	रा ऽ ऽ	मा ऽ	ऽ ऽ
ध़ ध़ —	ध़ —	ऩी —	प़ — —	प़ —	ग —
कौ ऽ ऽ	न ऽ	रे ऽ	मा ऽ ऽ	से ऽ	ऽ ऽ
ग ग —	ग —	ग —	ग रे —	ग —	ग —

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

कौ ने ऽ	मा ऽ	से ऽ	ल ग ऽ	ले ऽ	टि ऽ
ग ग रे	रे ग	ग रे	सा — ऩी	ध़ —	— ध़
को ल ऽ	वा ऽ	हो ऽ	रा ऽ ऽ	ऽ ऽ	ऽ म
ध़ ध़ —	ध़ —	ऩी —	प़ — —	प —	प —
कौ ऽ ऽ	ने ऽ	रे ऽ	मा ऽ ऽ	से ऽ	ऽ ऽ
प — प	प —	प —	प — —	प —	प —
हो ऽ ऽ	मो ऽ	रे ऽ	रा ऽ म	हो ऽ	ऽ ऽ

प — म॑	ग —	रे —	प — —	प —	प —
हो ऽ ऽ	ऽ ऽ	ऽ ऽ	हो ऽ ऽ	ऽ ऽ	ऽ ऽ

ध ध —	ध —	ध —	प — म॑	ग —	ग —
हो ऽ ऽ	ऽ ऽ	ऽ ऽ	हो ऽ ऽ	रा ऽ	मा ऽ

प प —	प —	म॑ —	ग — —	रे —	रे —
कौ ऽ ऽ	ने ऽ	ऽ ऽ	मा ऽ ऽ	से ऽ	ऽ ऽ

प प —	प —	म॑ —	ग ग —	रे —	रे —
अ म ऽ	वा ऽ	ऽ ऽ	हो ऽ ऽ	रा ऽ	मा ऽ

नी नी —	नी —	ध —	प — म॑	ग —	ग —
आ म ऽ	मं ऽ	ज ऽ	र इ ऽ	ले ऽ	ऽ ऽ
रे — —	रे —	रे —			
हो ऽ ऽ	रा ऽ	मा ऽ			

कहरवा—द्रुत :

1 2 3 4	5 6 7 8	1 2 3 4	5 6 7 8
ऩी ऩी ऩी ऩी	ऩी ध़ ध़ ऩी	प़ प़ प़ प़	प — प म॑
कौ ने मा से	ल ग ले टि	को ल वा हो	रा ऽ मा ऽ
ग़ रे ग रे	रे — रे —	ऩी ऩी ऩी ऩी	ऩी ध़ ध़ ऩी

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

ऽ ऽ कौ ने	मा ऽ से ऽ	कौ न मा से	आ म मं ज
प़ प़ प़ प़	प — प म॑	ग रे ग रे	रे — रे —
र इ ले हो	रा ऽ मा ऽ	ऽ ऽ कौ ने	मा ऽ से ऽ

टिप्पणी : आगे की पंक्तियाँ भी क्रमशः दोनों तालों में स्वेच्छा से गाई जाएँगी। इस गीत की स्वरलिपि में पाठकों तथा गायकों को ध्यान देना आवश्यक है क्योंकि मन्द्रग्राम और मध्यग्राम के स्वरों का प्रयोग बहुत समीप में किया गया है। यह धुन की विशेषता है। घाटो चैती में दो दलों के बीच इसी प्रकार की शैली प्रयुक्त होती है।

K.C. Gangrade
4. 3. 1982.

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi